ASSISTED REPRODUCTIVE TECHNOLOGIES

संतानोत्पत्ति में सहायक तकनीकियां

ए आर टी और महिलाएं

संतानोत्पत्ति में सहायता या अधीनता?

समा

ASSISTED REPRODUCTIVE TECHNOLOGIES

संतानोत्पत्ति में सहायक तकनीकियां

ए आर टी और महिलाएं

संतानोत्पत्ति में सहायता या अधीनता?

समा

इस रिपोर्ट में दी गई सूचना जनहित में प्रचार–प्रसार हेतु है। इसे कोई भी, समा (Sama) से साभार, इस्तेमाल कर सकता है।

इस दस्तावेज़ की परिकल्पना और विकास हेतु समा से एन.बी. सरोजनी एवं मंजीर मुखर्जी के आभारी हैं। अध्ययन की विभिन्न प्रक्रिया–साक्षात्कार, आकड़ों का विश्लेषण साहित्य की समीक्षा और रिपोर्ट को पूरा करने के लिए प्रीति नायक, रिद्धी भंडारी, सुचिता चक्रवर्ती, दीपा बेंकटचलम, अनुज कपिलाश्रमी, रोशनी सुभाष, बीनू रावत, नेहा सूरी, पारुल सारस्वत और शाश्वती भट्टाचार्य के सहयोग की भी सराहाना करते हैं।

इस दस्तावेज का प्रकाशन नोविब और द फोर्ड फाउंडेशन (The Ford Foundation) के सहयोग से किया गया है।

पहला संस्करण 2007

प्रकाशक:
समा – महिला और स्वास्थ्य के लिए संदर्भ समूह
बी–45, दूसरी मंजिल
मेन रोड शिवालिक, मालवीय नगर
नई दिल्ली–110017
दूरभाष : 011–65637632, 26692730
ई–मेल : sama.womenshealth@gmail.com
sama_womenshealth@vsnl.net

आवरण: रंजन डे

मुद्रक:
इम्पल्सिव क्रिएशंस
8455, सेक्टर सी, पॉकेट 8,
वसंत कुंज, नई दिल्ली–110070

परिचय

पिछले दो दशकों में ऐसी तकनीकियों की संख्या में भारी वृद्धि हुई है जो संतानोत्पत्ति में तरह–तरह से सहायक हो सके, जैसे गर्भधारण की संभावना में वृद्धि; और गर्भ का समुचित विकास। एआरटी यानी "एसिस्टेड रिप्रोडक्टिव टेक्नोलॉजी" दरअसल संतानोत्पत्ति में सहायक तकनीकियां हैं जिनके तहत कई प्रक्रियाएं शामिल हैं जैसे सामान्य 'इंट्रायूटेराइन इनसेमिशेन' (गर्भाशय में वीर्य पहुंचाकर गर्भाधान करवाना) से लेकर 'इन–विट्रो फर्टीलाइजेशन' (परखनली शिशु तकनीक) की विविध तकनीकियां और फिर भ्रूण स्थानांतरण (आईवीएफ–ईटी), जिसे बोलचाल की भाषा में "टेस्ट ट्यूब बेबी टेक्नोलॉजी" कहते हैं। वैसे तो अक्सर इन्हें संतानोत्पत्ति की 'नई' तकनीकियां करार दी जाती हैं पर गौरतलब है कि ऐसी कई तकनीकियां आज नहीं, बल्कि 16वीं सदी से ज्ञात हैं।[1] हालांकि सन् 1870 के दशक से ही मनुष्यों में 'आर्टिफिसियल इनसेमिनेशन' (कृत्रिम निषेचन) का चलन रहा है, पर 20वीं सदी के आरंभ से इन तकनीकियों का चलन कुछ ज़्यादा ही बढ़ गया है जिसके कारणवश समाज में गर्भधारण, संतानोत्पत्ति और मातृत्व से संबंधित धारणाओं पर भी इनका असर पड़ा है।

सन् 1978 में ओल्डहम्, लंकाशायर, इंग्लैण्ड में लुई ब्राउन, दुनिया की पहली 'आईवीएफ बेबी', के जन्म के साथ ही एक 'नए युग' का आरंभ हुआ। इस घटना को मीडिया ने कुछ ऐसे सुर्खियों में पेश किया कि मानो दुनिया भर के निःसंतान दंपत्तियों की प्रार्थना सुन ली गई हो। इतना ही नहीं, इन तकनीकियों को ऐसे दर्शाया गया जैसे अब महिलाओं को यह आज़ादी मिल गई है कि वे अपने संतानोत्पत्ति की क्षमता पर खुद नियंत्रण रख सकती हैं।

यह एक मील का पत्थर अवश्य था पर क्योंकि इसका सीधा संबंध स्वास्थ्य, समाज और तकनीकी से था इसलिए इससे कई जटिल समस्याएं उठीं। 'एआरटी' तकनीकीयां महिलाओं की मां बनने की इच्छा को पूरा करने में सहायक तो हो सकती है, पर इसका असर उनके जीवन के विभिन्न पहलु पर भी पड़ता है। विशेषकर पुरुष–प्रधान परिवार और वर्तमान बाजारीकरण के (दोहरे) संदर्भ में यह बात और भी मायने रखती है। इस स्थिति में सामाजिक संरचनाओं, वैज्ञानिक संस्थानों और बाजार के बीच परस्पर संबंध; तथा नई एआरटी तकनीकियों के विकास (निमार्ण) और व्यापक पैमाने पर इनके उत्पादन पर इस सब के असर की फिर से समीक्षा

आवश्यक हो जाता है। विज्ञान और सामाजिक मान्यताओं के बीच द्विपक्षीय संबंध को देखते हुए यह पहलू और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। गौरतलब है कि सामाजिक रूप से स्वीकृत बातें विज्ञान को आकार भी देती हैं और उनको मज़बूत करने में भी कार्यरत रहती हैं। अतः मातृत्व से संबद्ध वैज्ञानिक शोधों एवं सामाजिक दबावों के बीच परस्पर संबंध को समझना निहायत ज़रूरी हो जाता है।

सन् 2004 से 2006 के बीच समा–महिला एवं स्वास्थ्य के लिए संदर्भ समूह ने भारतीय परिदृश्य[2] में महिलाओं के जीवन पर एआरटी के विभिन्न परिणामों–चिकित्सकीय, सामाजिक एवं नैतिक पहलुओं–पर दिल्ली, मुंबई और हैदराबाद में केंद्रित एक गहन अध्ययन किया। यह अध्ययन इस मौलिक सोच को दिशानिर्देश मान कर आरंभ हुआ कि किसी पितृसत्तात्मक समाज में दरअसल महिलाओं पर एआरटी के बढ़ते चलन का दोहरा असर पड़ता है। एक ओर उन्हें मौजूदा पितृसत्तात्मक परिवार के दबाव को झेलना पड़ता है और दूसरी ओर उनके दैनिक जीवन पर लगातार चिकित्सकीय बोझ का प्रभाव भी पड़ता है। वास्तव में इस अवधारणा के पीछे यह ऐतिहासिक तथ्य है कि किसी ऐसे वर्ग में जो शोषण–प्रधान और असमान संबंधों से ग्रस्त हो, किसी नई तकनीकी के आने के परिणामस्वरूप असमानता घटने की बजाय, बढ़ती जाती है और कुल मिलाकर इससे संबंधित समूहों का शोषण भी और बढ़ जाता है।[3]

यह आलेख इसी अध्ययन के कुछ पहलुओं पर विचार करता है।

शोध का पहला भाग भारत में एआरटी के इतिहास की रूपरेखा देता है। इसमें सार्वजनिक क्षेत्र के आरंभिक प्रयासों; तथा गर्भधारण एवं गर्भनिरोध तकनीकियों पर जारी शोध के बीच कड़ी पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

दूसरे भाग में इस अध्ययन की पद्धति का विवरण है। तीसरे भाग में आईवीएफ केंद्रों पर आने वाली महिलाओं और यह तकनीकि प्रदान करने वाले डाक्टरों से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर बनी सोच को पुष्ट करते कुछ निष्कर्ष दिए गए हैं।

अगले भाग में एआरटी के बाज़ारीकरण और भारत में इस उद्योग में किसी प्रकार के नियंत्रण के अभाव के मद्देनजर प्राप्त निष्कर्षों पर चर्चा है। इसमें कुछ अन्य महत्वपूर्ण मुद्दों पर भी प्रकाश डाला गया है जिसके आधार पर पूर्व उल्लेखित दिशानिर्देश की समीक्षा की जा सके।

निष्कर्ष में, भारत में विभिन्न सामाजिक आंदोलनों की एआरटी तकनीकियों के प्रति प्रतिक्रियाएं शामिल हैं।

भारत में एआरटी

संभव है कि भारत के पहले टेस्ट ट्यूब बेबी का जन्म लुई ब्राउन के जन्म से कुछ महीने बाद ही हुआ हो। दुनिया के दूसरे आईवीएफ बेबी, दुर्गा, के जन्म में कोलकाता के एक फर्टिलीटी विशेषज्ञ की दावेदारी बताई जाती है। लेकिन डॉ. सुभाष मुखर्जी के इस दावे को मान्यता प्राप्त नहीं हुई क्योंकि इसका समुचित रिकार्ड नहीं रखा जा सका था।[4] आगे चलकर 6 अगस्त 1986 को भारत के पहले आईवीएफ शिशु हर्षा का जन्म हुआ जिसके जन्म के "वैज्ञानिक रिकार्ड" प्राप्त हैं। यह कार्य भारतीय चिकित्सा शोध परिषद के 'इंस्टीट्यूट फॉर रिसर्च इन रिप्रोडक्शन (आईआरआर)' और एक म्युनिसिपल अस्पताल, किंग एडवर्ड्स मेमोरियल अस्पताल (केईएम) के संयुक्त प्रयासों से सपंन्न हुआ[5]। इस प्रक्रिया में व्यक्तिगत रूप से सम्मिलित होने वालों में मुंबई म्युनिसिपल हॉस्पीटल की प्रसूति विशेषज्ञ डा. इंदिरा हिंदूजा और आईआरआर के डॉ. टी सी आनंद कुमार प्रमुख थे।

इस प्रयास के पीछे सुनियोजित रूप से सरकार के जनसंख्या नियंत्रण के लक्ष्य भी सामने आते हैं। भारतीय चिकित्सा शोध परिषद (आईसीएमआर) के बुलेटिन से यह बात बिल्कुल स्पष्ट है:

"भारत में नसबंदी गर्भनिरोध का सबसे प्रचलित माध्यम है। हालांकि नवजात शिशु और बाल मृत्यु की अधिक दर के कारण कई महिलाएं, जिन्होंने पहले नसबंदी करवाली है, फिर से नली खुलवाने (ट्यूब रीकैनेलाइजेशन) के लिए आगे आ रही हैं।"

नसबंदी के बाद नली खुलवाने की तुलना में आईवीएफ–भ्रूण (आईवीएफ–ईटी) स्थानांतरण में कम शल्य उपचार करना पड़ता है। अतः यदि किसी दंपत्ति को यह विश्वास हो जाए कि दुर्भाग्यवश बच्चा खोने की स्थिति में आईवीएफ–ईटी से निस्संदेह पुनः गर्भधारण संभव है, तो वह नसबंदी को परिवार नियोजन की एक पद्धति के रूप में अपनाने के लिए सहर्ष तैयार हो जाएगा। इस कारणवश परखनली शिशु तकनीक (आईवीएफ) हमारे राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम के लिए बहुत ही अहम् हो जाऐगी।[6]

डॉ. टी सी आनंद कुमार का तो बल्कि यह कहना है कि आईवीएफ–ईटी की बेहतर समझ से यह पता चल सकता है कि प्रजनन में सक्षम दंपत्तियों से उनकी यह क्षमता अस्थायी रूप से बाधित कर किस प्रकार परिवार नियोजन को सफल बनाया जा सकता है।[7]

सचमुच, इससे गर्भधारण एवं गर्भनिरोध की तकनीकियों के बीच अटूट संबंध स्पष्ट होता है। दरअसल ये एक ही सिरे में तकनीकी विविधता के दो पहलू हैं। दोनों में महिलाओं के शरीर ही लक्ष्य बनते हैं और उनकी शारीरिक प्रक्रियाओं में हस्तक्षेप कर उनकी संतानोत्पत्ति की क्षमता पर नियंत्रण का प्रयास किया जाता है।

यद्यपि भारत में, आरंभ में, एआरटी संबंधी शोध एवं प्रचार–प्रसार का काम एक सरकारी पहल थी पर शीघ्र ही यह निजी स्वास्थ्य क्षेत्र के अधीन हो गयी और आज एक सफल निजी उद्यम के रूप में फल–फूल रही है। समय के साथ सार्वजनिक क्षेत्र ने तो इससे अपने हाथ खींच लिए पर भारतवर्ष में अपने आरंभ से लेकर आज तक यह निरंतर विस्तृत होता जा रहा है। यहां इसका संभावित बाज़ार एक संकीर्ण अनुमान से 25,000 करोड़ रु. का है।[6] देश भर में अनुर्वरता (इनफर्टीलिटी) का उपचार करते क्लिनिकों की संख्या भी हर रोज़ बढ़ती जा रही है। छोटे–छोटे शहर और ग्रामीण इलाके भी इससे अछूते नहीं रहे हैं। उल्लेखनीय है कि न केवल भारतीय बल्कि विदेशों से निःसंतान दंपत्ति भी बड़ी संख्या में आ रहे हैं। भारत में चिकित्सा पर्यटन के बढ़ते इस चलन का श्रेय यहां कम कीमत पर उपलब्ध किफ़ायती चिकित्सकीय सेवा को जाता है।

अनुर्वरता और एआरटी उद्योग

चिकित्सा विज्ञान की आधुनिकता में एआरटी मौजूदा सामाजिक परिवेश का आईना है, जिसमें सामाजिक व्यवस्थाओं और सामाजिक अधिकारों का समावेश होता है। भारत समान पितृ–प्रधान देश में गर्भधारण और मातृत्व का विशेष महत्व है–लेकिन अविवाहितों पर यह बात लागू नहीं है। किन्हीं कारणवश इस भूमिका को निभाने में असफल दंपत्ति, विशेषकर महिला के लिए कलंक, सामाजिक मज़ाक और यहां तक कि समाजिक बहिष्कार का कारण बन सकता है। ऐसे दंपत्ति इस हीन भावना के साथ जीते हैं कि ''सामान्य'' और उनसे ''अपेक्षित'' भूमिका का निर्वाह वे ठीक प्रकार से नहीं कर पा रहे हैं। और जो बात सबसे अधिक प्रभावित करती है वह यह कि इस असफलता के लिए सिर्फ़ महिला को ही ज़िम्मेदार ठहराया जाता है। यह तर्क पितृसत्तात्मक समाज से उभरा है जिसमें सदियों का विश्वास है कि प्रजनन केवल महिलाओं की ज़िम्मेदारी है। दरअसल उनके लिए प्रजनन को अनिवार्य कर दिया गया है मानो इसके बिना उनका कोई वजूद ही नहीं हो और वह अपूर्ण हों। इसके साथ ही उन्हें बच्चे को नहीं, बेटे को जन्म देना है जो आगे चलकर वंश बढ़ाएंगे, और, इस प्रकार पितृसत्तात्मक समाज में अनुर्वरता महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर खतरा बन जाती है। निःसंतान होना व्यक्तिगत नहीं बल्कि एक सामाजिक संकट बन जाता है, जिसके परिणामस्वरूप महिलाओं से उनका वजूद ही छिन जाता है। प्रजनन की इतनी सामाजिक महत्ता के कारण इसका अंदाजा लगाना कठिन नहीं

कि आाखिर क्यों महिलाएं बच्चा गोद लेने के बदले एआरटी की कठिन प्रक्रिया से बार–बार गुज़रने के लिए तैयार हो जाती हैं।

एआरटी उद्योग इस प्रचलित अवधारणा पर कार्य करता है कि अनुर्वरता एक महामारी की तरह फैल रही है। हालांकि इस अवधारणा की पुष्टि के लिए आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं, पर यह एक आमधारणा बन गई है और विभिन्न प्रचार माध्यम और चिकित्सा जगत से जुड़े कुछ लोग इस बात का प्रचार भी कर रहे हैं। दरअसल निःसंतान होने का 'चिकित्साकरण' (मेडिकलाइजेशन) और अंततः इसे एक बीमारी का स्वरूप देना एक बड़ी राजनीति का हिस्सा है जो गर्भधारण की क्षमता और अक्षमता दोनों के व्यावसायीकरण के पीछे काम करती है। एक बार अनुर्वरता साबित हो जाए तो एआरटी तकनीकियों का प्रयोग अहम् हो जाता है। यह अनुर्वरता की समस्या के विकल्प के रूप में उपचार बनकर सामने आता है। हालांकि गौर करने की बात है कि एआरटी में चिकित्सकीय भाषा का उपयोग तो होता है पर इनमें अनुर्वरता के कई प्रमुख कारणों जैसे प्रदूषण, कार्यालयीय तनाव या फिर अनदेखी कर दी गई पेढ़ू की बीमारियों को नज़रअंदाज कर दिया जाता है। यह ज़्यादा–से–ज़्यादा किसी गहरी समस्या का 'व्यक्तिगत तौर' पर ही समाधान बन सकता है।

अनुर्वरता की सत्त बदलती परिभाषा से भी एआरटी उद्योग को बढ़ावा मिल रहा है। सन् 1975 से पहले, विश्व स्वास्थ्य संगठन की परिभाषा में यदि कोई दंपत्ति बिना किसी गर्भनिरोध के 5 साल तक यौन संबंध के बाद भी गर्भधारण में सफलता प्राप्त नहीं करता तो उसे संतापोत्पत्ति में अक्षम घोषित कर दिया जाता है। सन् 1975 में यह समय सीमा घटाकर दो वर्ष कर दी गई और 2005 आते–आते इसे एक वर्ष कर दिया गया।[9] भारतीय चिकित्सा शोध परिषद के दिशानिर्देश[10] में अनुर्वरता का अर्थ है ''बिना किसी गर्भनिरोध के 1 साल तक यौन संबंध के बाद भी गर्भधारण में असफलता।''[11] इस प्रकार सिमटती समय सीमा से चिकित्सा संस्थानों और इससे जुड़े अन्य आर्थिक एवं वैज्ञानिक दावेदारों के इस बात को बहुत बल मिला है कि सचमुच यह समस्या एक महामारी–सा रूप ले चुकी है। इससे महिलाओं की प्रजनन के मामले में चिकित्सकीय हस्तक्षेप भी बढ़ गया है। ऐसा लगता है कि आने वाले दिनों में बच्चा नहीं होने की अस्थायी स्थिति में भी अधिक–से–अधिक संख्या में दंपत्तियों को जल्दबाज़ी में निःसंतान घोषित कर दिया जाएगा।

सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि एआरटी पर उठे विवाद में अक्सर महिलाओं को ही नज़रअंदाज कर दिया जाता है। अनुर्वरता के मामले में महिलाओं को अधिक ज़िम्मेदार माना जाता हैं। सामाजिक दबाव एवं स्वास्थ्य संबंधी खतरे दोनों मूलतः महिलाओं के ज़िम्मे ही आते हैं, और मुमकिन है कि नित नई तकनीकियां, जो बाज़ार में आती हैं, उनमें समुचित सुरक्षा की बात पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया जाता, और

महिलाएं कुल मिलाकर इन तकनीकी प्रयोगों में 'गायना पिग' (जिन पर प्रयोग किया जाता) बन कर रह गई हैं। ऐसे परिपेक्ष्य में संभव है "डाल्कन शील्ड" की कहानी"[12] की पुनरावृत्ति हो रही है।

इन बातों के मद्देनजर यह जरूरी है कि महिलाओं पर एआरटी के विभिन्न चिकित्सकीय, सामाजिक या नैतिक परिणामों को पूरी तरह समझा जाए।

समा ने वर्ष 2004–2006 के दौरान भारत में महिलाओं पर एआरटी के सामाजिक, चिकित्सकीय और नैतिक प्रभावों के मद्देनजर एक अध्ययन किया। इसमें एआरटी तकनीकी देने वालों और इस प्रक्रिया से गुजरती महिलाओं के अलावा देश के विभिन्न सामाजिक आंदोलनों के स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं एवं नारीवादियों से साक्षात्कार किए गए।

पद्धति

यह अध्ययन गुणात्मक था। इसमें एआरटी प्रक्रियाओं से गुजरतीं महिलाओं के अनुभवों पर अधिक बल दिया गया था। इस प्रकार की तकनीकी सुविधा प्रदान करने वाले डाक्टरों और इनका उपयोग करती महिलाओं से अनौपचारिक, पर विस्तृत बातचीत से प्राथमिक आंकड़े प्राप्त किए गए। साक्षात्कार अर्धविकसित ढ़ांचे के अंतर्गत किए गये। आईसीएमआर के अधिकारियों समेत नारीवादियों और भारत में जारी विभिन्न सामाजिक आंदोलनों से जुड़े लोगों से पूरक साक्षात्कार लिए गए। एआरटी पर प्रकाशित आलेखों और अन्य प्रकाशित सामग्रियों की समीक्षा की गई। आईसीएमआर के दिशानिर्देशों पर भी गौर किया गया ताकि उपलब्ध कानूनी नियंत्रण व्यवस्था को बेहतर समझा जा सके।

यह अध्ययन दिल्ली, मुंबई और हैदराबाद में केंद्रित था। इसमें तकनीकी सुविधा देने वाले कुल 23 एआरटी डॉक्टरों से साक्षात्कार किये गये। आईयूआई और आईवीएफ की प्रक्रिया से गुजरतीं 25 महिलाओं का साक्षात्कार किया गया। इस उपचार हेतु सलाह प्राप्त करती कई महिलाओं से भी बातचीत की गई। ये सभी महिलाएं विवाहित थीं।

उद्देश्य :

यह शोध निम्नलिखित बातों पर केंद्रित था :

- यह तय करना कि महिलाएं किस परिस्थिति में एआरटी के लिए आगे आती हैं और इसकी क्या (शारीरिक, सामाजिक, आर्थिक) कीमत चुकाती हैं;

- यह समझना कि एआरटी तकनीकी प्रदान करने वाले ''उपचार'' और उसे ''उपयोग'' करने वालों के प्रति क्या राय रखते हैं एवं उनकी क्या महत्वता है;
- इस ''उपचार'' के बारे में महिलाओं की राय और उनके अनुभवों को समझना; और
- राष्ट्र स्तर पर इस संबंध में नियम–कानून को समझना एवं इसमें छिपे अन्य नैतिक मुद्दों को समझना

यह शोध यह समझने की भी कोशिश करेगा कि एआरटी किस प्रकार लोगों की आंतरिक सोच को प्रभावित कर रहा है एवं यह तकनीकियां किस प्रकार महिलाओं को पैत्रिक ढांचे में बने सामाजिक मूल्यों में ढलने को मजबूर कर रही है।

निष्कर्ष

एआरटी तकनीकियां प्रदान करने वाले डॉक्टरों और इनका उपयोग करने वाली महिलाओं, दोनों वर्गों से बातचीत से यह पता चला कि आज हर तबके के लोग, अमीर–गरीब, पढ़े–लिखे व अनपढ़ तथा हर धर्म–संप्रदाय के लोग एआरटी का प्रयोग कर रहे हैं – सबका यही कहना है कि अपना ''जैविक बच्चा'' हो, यह चाहत, समाज की सभी सीमाओं से परे हैं। और लोग इसके लिए कुछ भी खर्च करने को तैयार हैं भले ही वह उनकी पहुंच में हो, या नहीं।

उल्लेखनीय है कि एआरटी कारोबार में लगे लोगों ने उसूलन सिर्फ़ विवाहित महिलाओं का जिक्र किया है और साक्षात्कार की गई सभी महिलाएं भी विवाहित थीं। कुरेद कर पूछे जाने के बावजूद अधिकांश डॉक्टरों ने बताया कि वे सिर्फ़ विवाहितों को यह तकनीकी सुविधा देते हैं, अविवाहितों या एकल रह रही महिलाओं या फिर समलैंगिक संबंध में महिलाओं के लिए उनके द्वार बंद हैं। यह एक प्रकार से मानी हुई 'स्वाभाविक एक रेखीय' गति है जिसकी कड़ियां हैं पहले महिला, फिर विवाह और उसके बाद मातृत्व। एआरटी की प्रक्रिया से गुज़रती महिलाओं पर गौर करने से स्पष्ट होता है कि यह पूरी तरह गैर–समलैंगिक ढांचे में काम करता है और साथ ही उसे मज़बूती भी प्रदान करता है। और इस प्रकार किसी भी प्रगतिशील आंदोलन में महिला मुक्ति की कोशिश नाकाम हो जाती है। अन्य शब्दों में एआरटी पर चिकित्सकीय विचार में वैकल्पिक यौन संबंधों को कोई जगह नहीं दी गई है।

संतानोत्पत्ति हेतु सामाजिक दबाव

डाक्टरों का दृष्टिकोण

ऐसे सभी 23 तकनीकी क्लिनिकों की आम सहमति थी कि दंपत्तियों, विशेषकर महिलाओं, पर संतानोत्पत्ति का सामाजिक दबाव रहता है। हालांकि उन्होंने इस दबाव की गहराई में जाना मुनासिब नहीं समझा एवं कभी कोशिश भी नहीं की। उन्होंने इस 'समाजिक समस्या' का भी केवल 'तकनीकी समाधान' देना बेहतर समझा। उनकी राय यह थी की कि क्योंकि अनुर्वरता और संतानहीनता का सारा दोष महिलाओं को ही दिया जाता है अतः वे एक बच्चे को जन्म देने के लिए सभी प्रकार के चिकित्सकीय और तकनीकी दखलंदाजी के लिए तैयार हो जाती हैं, चाहे इसके लिए उन्हें कोई कीमत (शारीरिक, मानसिक या फिर आर्थिक) चुकानी पड़े।

> "कभी–कभी महिलाओं पर पहले चक्र में ही गर्भवती होने का भारी दबाव रहता है। ऐसे में वे भारी मानसिक तनाव झेलने को मजबूर होती हैं।"
>
> –एक एआरटी डॉक्टर का कथन

> "सामाजिक दबाव के कारण महिलाएं अक्सर बहुत हताशा के साथ हमारे पास आती हैं।"
>
> –एक अन्य एआरटी डॉक्टर की राय

तकनीकी सेवा देने वालों की नज़र में लोग बच्चा गोद लेना के विकल्प की ओर विचार ही नहीं करते क्योंकि वह बच्चा 'अपना खून' नहीं होता। जब हर तरफ से निराशा हाथ लगती है तब ही लोग बच्चा गोद लेने के अंतिम विकल्प को अपनाते हैं। तकनीकी सेवा प्रदान करने वालों ने यह माना कि वे गोद लेने की सलाह सिर्फ़ उन दंपत्तियों को ही देते हैं जो एआरटी की खर्चीली तकनीकियों का लाभ नहीं उठा सकते।

महिलाओं का दृष्टिकोण

साक्षात्कार के लिए चुनी गई 25 महिलाओं में से 19 की यह टिप्पणी थी कि बच्चा पैदा करना एक सामाजिक अनिवार्यता है। हालांकि इनमें 16 महिलाओं ने कहा कि उन पर परिवार का कोई स्पष्ट दबाव नहीं था बल्कि उनके परिवार ने पूरी प्रक्रिया में उनका पूरा साथ दिया।

> "परिवार का कोई ऐसा दबाव नहीं है। लेकिन ज़रूरी नहीं कि कोई बताए या कहे तो ही आपको बच्चे की चाहत होगी, शादी के बाद स्वाभाविक है कि आपके

मन में यह चाहत जगती है। कोई कहे या नहीं, हर कोई महसूस करता है कि 'अब शादी को तीन साल हो चले हैं, अब तो एक बच्चा होना ही चाहिए।''

''परिवार की ओर से किसी प्रकार का कोई दबाव नहीं है। दरअसल मुझे ही यह हीन भावना होने लगी कि शादी के छह वर्षों के बाद भी गर्भधारण नहीं कर पाई। अंदर से एक खालीपन लगता है जो किसी को बताना भी कठिन है। अब इसके बारे में सोचकर मुझे हताशा भी होती है।''

''मेरे पति विदेश में थे। मुझे इस बात की चिंता थी कि वे किसी दूसरी महिला से शादी न कर लें। हालांकि उन्होंने मुझे विश्वास दिलाया था कि ऐसा कुछ नहीं होगा। वैसे तो लोग सीधे कुछ नहीं कहते पर मुझे उनका रवैया मेरे प्रति बदलता नज़र आया। मुझे खुशी के किसी मौके पर नहीं बुलाया जाता। मुझे यह लगता मानो लोग हमें 'दूसरी नजर' से देख रहे हैं।

कुछ ऐसी महिलाएं भी थीं जिनके परिवार में बच्चे की सीधी मांग की गई थीः ''मैं एक संयुक्त परिवार में रहती थी और मुझ पर लगातार बच्चे के लिए दबाव डाला जा रहा था। अंततः मुझे मेरे पति के साथ अलग घर लेना पड़ा।''

महिलाओं की इन प्रतिक्रियाओं से यह साफ होता है कि चाहे कारण जो भी हो निःसंतान होने पर उन्हें विभिन्न तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। परिवार–रिश्तेदार या फिर पड़ोसियों के व्यवहार में कभी–कभी यह साफ झलकता है, अक्सर महिलाएं इन स्थितियों को सह लेती हैं पर धीरे–धीरे यह उनमें हताशा और हीन भावना को विकसित कर देता है।

इस परिस्थिति में यह अंतर करना कठिन हो जाता है कि कोई महिला बच्चा क्यों चाहती है। क्या वह सोच–समझ कर राज़ी–खुशी बच्चे की चाहत रखती है या सामाजिक परिवेश के दबाव के कारण बच्चा चाहती है, जिसमें बच्चा पैदा करने में असक्षम महिला को 'अधूरा' मान लिया जाता है। यह धारणा इस तथ्य से प्रभावित है कि मातृत्व ही किसी महिला की असली मंजिल है। अतः अक्सर पुरुषों की निःसंतानता या अनुर्वरता के मामलों में भी वे खुद को दोषी मान लेती हैं।

दुहराने की ज़रूरत नहीं कि 'मातृत्व' (अपना जैव बच्चा होना) के पहलू को गौरवान्वित किया गया है। और शायद यही वजह है कि गोद लेने के मुद्दे पर बोलने वाली 19 महिलाओं में 6 ने इसे कतई एक विकल्प नहीं माना। उनमें 7 ने कहा कि वे ''पहले हर संभव विकल्प'' को आजमाना चाहेंगीं। अन्य 6 महिलाओं (जिन्होंने कहा था कि वे कभी–कभी बच्चा गोद लेने की सोचा करतीं हैं), में 3 ने

कहा कि वे स्वयं तो इस विचार से सहमत हैं पर उनके पति और परिवार को ऐतराज़ था। कुछ ने कहा कि वे बच्चा गोद इसलिए नहीं लेंगी क्योंकि गोद लिए गए बच्चे को सामाजिक कलंक और बहिष्कार के साथ जीना पड़ेगा। अधिकांश खुद अपने बच्च्चे को जन्म देने के पक्ष में थीं और उन्हें यकीन था कि एआरटी तकनीकियों से यह संभव है। दरअसल, उनके चिकित्सकों ने भी उन्हें यह उम्मीद दी थी।

इस प्रक्रिया की जानकारी और अनुभव, जैसा कि महिलाओं ने बताया:

> "पता नहीं यह प्रक्रिया कब खत्म होगी। मुझे तो लगता है कि मुझे एक बोतल में बंद कर समुद्र में फेंक दिया गया है और मैं समुद्र से बाहर निकलने के लिए बेतहाशा हाथ–पैर मार रही हूं। पर समझ नहीं आता कैसे निकलूं।"
>
> – अध्ययन के दौरान साक्षात्कार में शामिल एक महिला की कहानी।

17 महिलाओं ने उपचार से संबंधित अपनी जानकारी और अनुभव बांटे। 11 ने साफ शब्दों में कहा कि यह उपचार, और जो भी हो, 'मानसिक तनाव', 'थकान भरा' और 'हताशाजनक' अवश्य है।

जैसा कि एक महिला ने कहा, "पूरी प्रक्रिया में सबसे कठिन है कि यह मानसिक रूप से यातनापूर्ण है। मैं वैसे तो काफी जुझारू हूं पर तनाव और हताशा के वो पल मैंने झेले हैं कि लगता है मानो मेरी दुनिया ही थम गई है। एक बार आईवीएफ चक्र असफल हो जाए तो लोग पूरी तरह टूट जाते हैं। खुद को, या फिर अपनों को कैसे उम्मीद दें, समझ नहीं आता। चारों तरफ हताशा नज़र आती है। यकीन मानिए इस प्रक्रिया से गुज़रना आसान नहीं है।"

दो महिलाओं ने माना कि यह प्रक्रिया के दौरान शुरू के सालों में बहुत तनाव रहा। आगे इस अंतहीन उपचार की तरह तनाव की भी आदत पड़ गई।

एक महिला ने उपचार के दौरान हुए अपने अनुभव हमसे बांटे : "इन प्रक्रियाओं का परिणाम मानसिक तनाव तो है ही साथ में भावनात्मक रूप से भी यह एक प्रकार का शोषण है। हम सिर्फ़ यह सोच और उम्मीद कर सकते कि भगवान कभी तो हमारी प्रार्थना सुनेगा। डॉक्टर का क्या है वह तो बस कह देते हैं कि "आ जाओ" और एक बार देखने के बाद कह देते हैं "सब ठीक है"। हम लोगों को हर बार कानपुर से आना पड़ता है, जिसमें हमारा बहुत पैसा और समय का नुकसान होता है। हमारा बच्चा जो मानसिक रूप से सामान्य नहीं है, उसे भी साथ लाना पड़ता है। जब हम डॉक्टर के पास आते हैं तो उसे रिश्तेदार के पास छोड़ आते हैं, अब उसे हर जगह तो नहीं ले जा सकते। पर डॉक्टर यह सब नहीं समझते। पिछली

बार यहां आई तो डाक्टरों ने कहा मुझे ओरल ग्लूकोज़ इन्सुलिन टेस्ट (ओजीटीटी) करवाना होगा, यानी एक प्रकार से खून में शक्कर की मात्रा की जांच। यदि रिपोर्ट सही होगी तो मुझे दवा (मेटफॉर्मिन) लेनी पड़ेगी। जब मैंने फोन करके जांच का नतीजा पूछा तो डाक्टर बहुत गुस्सा हो गईं और कहा कि उनसे आकर मिलें। उन्होंने दवा शुरू करने के लिए फोन पर ही कह दिया। मुझे समझ नहीं आता कि यदि बिना रिपोर्ट दवा शुरू हो सकती थी तो जांच की ज़रूरत क्या थी? उनके लिए तो यह खानापूर्ति के समान है और हमारी समस्या से उन्हें कुछ फर्क नहीं पड़ता। मेरी डाक्टर तो इतनी व्यस्त है कि हमारी समस्याओं को सुनने के लिए उन्हें फुर्सत ही नहीं, हमें कुछ बताना या फिर बात करना तो दूर। हमारे पास पूरी जानकारी भी नहीं है। लेकिन मैं आपसे अनुरोध करती हूं कि उन्हें यह सब नहीं बताना। रिपोर्ट आज भी तैयार नहीं है, इसका मतलब है मैं आज भी वापस नहीं जा सकती, अब कल और रुकना पड़ेगा और रिपोर्ट डॉक्टर को नहीं दिखायी तो आने का क्या फायदा?''

बाकी छह महिलाओं ने एआरटी क्लिनिक के प्रति असंतोष जताया और गर्भवती नहीं हो पाने के लिए अपने नसीब को दोष दिया। हालांकि बाकी बची महिलाओं ने इस पर बात करना मुनासिब नहीं समझा।

एक अन्य महिला ने कहा, ''डॉक्टर आधी–अधूरी बात बताते हैं या फिर बहुत मामूली बात कह कर टाल देते हैं। जिस पर बीतती है वही दर्द समझता है। लैप्रोस्कोपी करने से पहले उन्होंने बताया की एक मामूली चीरा लगेगा, पर जब यह हुआ तो मैं ही जानती हूं कि कितना दर्द हुआ। मैं तो अगले दो–तीन दिन बिस्तर से उठ नहीं पाई।''

इन छः महिलाओं में से एक महिला ने कहा कि अलग–अलग शहर में एआरटी उपचार की पद्धति भी अलग–अलग है। महिलाओं के विचार में यह एक प्रकार का जुआ है जो 'ट्रायल एण्ड एरर साईंस' (प्रयोगात्मक विज्ञान जिसकी सफलता निश्चित नहीं) पर आधारित है या फिर किस्मत या भगवान की मर्जी पर निर्भर है।

कुछ महिलाओं ने उपचार को वैज्ञानिक तो माना पर भाग्य एवं किस्मत के साथ भगवान की कृपा की बात भी की।

जैसा कि एक महिला ने कहा, ''पहले लैप्रोस्कोपी और फिर यह अल्ट्रासाउण्ड का सिलसिला जो हर महीने होता है आपको पूरी प्रणाली के प्रति प्रतिरोधक कर देता है। हर माह आप उम्मीद करती हैं कि इस महिने माहवारी नहीं होगी और आप मां बन सकती हैं। पर आने वाली माहवारी से सब उम्मीदें टूट जाती है। अंदर ही अंदर

जो बीतती उसे बताना नामुमकिन है। साल में बारह बार ही तो अवसर मिलता है गर्भधारण का जो बहुत कम लगता है। अचानक यह अहसास होने लगता है कि पुरुष कितने नसीब वाले हैं। वे हर दिन एक बच्चे के पैदाइश की नींव रख सकते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान यह बहुत ज़रूरी है कि आप सकारात्मक मानसिकता रखें और तन–मन से खुश रहें वरना इस प्रक्रिया से गुज़रते हुए आप टूट जाएंगी। हमारे जैसे मरीज़, जो बहुत दिनों से इलाज करवा रहे हैं और एक डाक्टर से दूसरे डाक्टर के पास भटक रहे हैं वह यह अच्छी तरह जानते हैं कि यह एक प्रयोगात्मक विज्ञान है जिसकी सफलता निश्चित नहीं है।''

एक अन्य महिला ने तो विज्ञान के वजूद पर ही सवाल उठाया और इसी सिलसिले में इसे सृष्टि की पौराणिक कथा से भी जोड़ दिया। उसने कहा : ''लोग कहते हैं विज्ञान तरक्की कर गया है पर मैं तो नहीं मानती। माना मेरी समझ कम है पर आप ही बताइए इसमें क्या प्रगति हुई है? महाभारत के दिनों में पांडु, धृतराष्ट्र और विदुर सभी व्यास मुनि के संतान थे। यहां तक कि पांडु के बेटे भी अलग–अलग देवों की संतान थे। मुझे तो यह सब सोच कर ही हैरानी हो रही है।''

आशा, निराशा और हताशा – एआरटी प्रक्रिया से गुज़रने के अनुभव कुल मिलाकर इन तीनों की जद्दोजहद है जो अंतहीन लगते हैं। कभी–कभी चक्र विफल होने पर ''कुछ नहीं होने'' की हताशा होती है। कभी डाक्टरों की संवेदनहीनता और उनकी अनदेखी का गहरा प्रभाव पड़ता है तो कभी गलत निदान या अधूरी जानकारी से इस पर असर होता है। पर साथ ही एक बच्चे को जन्म देने की उम्मीद उपचार को जारी रखती है और 'उपचार' जारी रहता है। यों तो अधिकांश महिलाएं मानती हैं कि यह तकनीकी प्रयोग भर है पर साथ ही इसकी विफलता का दोष वे खुद को देती हैं। इस प्रकार हमारे समक्ष इस प्रक्रिया को समझने की चुनौती हैं, जो चिकित्सा विज्ञान और सामाजिक–सांस्कृतिक भाषा का तालमेल लगता है। इस संदर्भ में शरीर और संतानोत्पत्ति की 'नई' परिभाषा भी समझनी पड़ती है। और फिर हम देखते हैं कि किस प्रकार महाभारत के हवाले से विज्ञान की 'नवीनता' पर सवालिया निशान लग चुका है, पर इतनी ज़रूर उम्मीद बनी हुई है कि वैज्ञानिक हस्तक्षेप से 'चमत्कार' होकर रहेगा।

जीवन पर प्रभाव (दिनचर्या, कार्य प्रणाली और यौन संबंध पर प्रभाव)

साक्षात्कार में शामिल 25 में 12 महिलाओं ने दिनचर्या, कार्य प्रणाली और यौन संबंध पर इस तकनीकी प्रक्रिया के प्रभाव के संबंध में कुछ नहीं कहा।

एक महिला ने कहा, "मेरे काम करने के ढंग और पूरे कारोबार पर इसका असर पड़ा है क्योंकि मुझे बार–बार डाक्टर के पास आना पड़ता है। हालांकि आपको यदि बच्चे की चाहत है तो आपको बहुत कुछ ऐसा करना होगा जो आप अन्यथा नहीं करेंगी। हर चीज की एक कीमत चुकानी पड़ती है।"

तीन महिलाओं ने कहा इससे सिर्फ़ उनकी दिनचर्या प्रभावित हुए है। एक महिला ने कहा, "उन दिनों (आईवीएफ के दौरान), बल्कि उससे भी पहले, मुझे जांच के लिए भूखे पेट आना पड़ता था, रिपोर्ट मिलने तक शाम हो जाती, क्योंकि जाने–आने में एक से डेढ़ घंटा लगता इसलिए वापस घर चले जाना भी आसान नहीं था। इसलिए मैं दिनभर यहीं अस्पताल में बैठी रहती – घर से लाया खाना यहीं बैठकर खा लेती। अब क्योंकि उपचार की अगली प्रक्रिया इसी रिपोर्ट पर निर्भर करती है इसलिए इंतजार करने के सिवा चारा भी क्या था! इसमें कोई शक नहीं कि हमने इसमें अपना समय और पैसा पानी की तरह बहाया है। पर और कोई दूसरा उपाय भी तो नहीं है हमारे पास ?"

चार महिलाओं ने बताया कि इसका उनकी दिनचर्या या फिर काम पर कोई असर नहीं पड़ा। हालांकि उन्होंने खुद माना कि ऐसा इसलिए है क्योंकि वे कामकाजी नहीं हैं। लेकिन उनके पतियों के दिनचर्या प्रभावित हुए है क्योंकि उन्हें काम छोड़कर साथ आना पड़ता हैं।

एक महिला ने माना : "मैं बाहर काम नहीं करती इसलिए जब भी डॉक्टर बुलाते हैं मैं आ जाती हूं। लेकिन मेरे पति, जो एक सॉफ्टवेयर इंजीनियर हैं, उनके दिनचर्या पर तो असर पड़ता ही है।"

एक अन्य महिला ने कहा कि इस तकनीकी प्रक्रिया का असर उसकी दिनचर्या और यौन संबंध पर पड़ा है। हालांकि शुरू के कुछ सालों में ही ऐसा हुआ। "शुरू के वर्षों में जब डाक्टर ने कहा कि मैं स्वाभाविक रूप से गर्भधारण का प्रयास करूं तो दी गई समय सीमा में यौन संबंध कायम करने की मजबूरी होती थी जो एक प्रकार का दबाव था। लेकिन अब हमें पता चल गया है कि गर्भधारण स्वाभाविक रूप से संभव नहीं रहा तो वह दबाव नहीं महसूस होता।"

इसी तरह एक और महिला ने कहा कि इस उपचार का असर न केवल उसके कामकाज बल्कि उसकी दिनचर्या और यौन संबंध पर भी पड़ा है। "हम क्यों नहीं मान लेते कि यह प्रक्रिया बहुत हताशाजनक है। इस दौरान आपका यौन संबंध आनंद के लिए नहीं होता पर यह एक प्रकार से आपकी मजबूरी बन जाता है। मैं एक बार गर्भवती हो जाऊं फिर कभी 'नहीं करूंगी' (यौन संबंध)। इन सालों में

हमने जितनी बार यह किया है उतना तब भी नहीं किया था जब हमें बच्चा नहीं चाहिए था।''

एक महिला ने कहा, ''मुझे पता चल गया कि मेरे पति से मुझे बच्चा नहीं हो सकता है और हमारा यौन संबंध असंभव है। मैं बता नहीं सकती कि उस समय मुझ पर क्या बीती! मैं अंदर से हिल गई थी। आखिर विवाह से मेरी भी कुछ उम्मीदें थीं। और फिर यौन संबंध की इच्छा को भी तो नकार नहीं सकते। हम सभी मनुष्य हैं और हमारी भी शारीरिक ज़रूरतें है।''

महिलाओं के इन बयानों में कई रुझान देखने को मिलते हैं। कुछ ने माना कि इस तकनीकी प्रक्रिया से गुजरने के दौरान उनकी दिनचर्या, काम–काज और यौन संबंधों पर बुरा असर पड़ता है। हालांकि अधिकांश महिलाओं ने बच्चे की अनिवार्यता और मातृत्व के आनंद को अब तक की लागत, अनुभव एवं परेशानी के मद्देनजर कम बताया हैं। अपने ही रोजगार में लगी या नौकरीपेशा महिलाओं ने ''बार–बार क्लिनिक जाने,'' ''बहुत देर तक इंतजार करने'' और ''लंबी दूरी तय करने'' की बात अवश्य की, जिससे उनका काम प्रभावित होता है। हालांकि जो महिलाएं कामकाजी नहीं थीं उन्होंने यह माना के उनके पति की तुलना में उनके काम और दिनचर्या के साथ समझौता किया जा सकता हैं। ये महिलाएं अपने पति के कारोबार/काम के आगे घरेलू काम को महत्व नहीं देतीं। महिलाओं ने यह भी माना कि यौन संबंध संतानोत्पत्ति की एक मशीनी प्रक्रिया मात्र बनकर रह गया है जिस पर हर समय डॉक्टरों की 'निगरानी' रहती है।

लंबे अरसे से इस प्रक्रिया से गुज़रती महिलाओं ने यह माना कि यह उपचार न केवल उनकी दिनचर्या में शामिल हो गया है, बल्कि उनका पूरा जीवन ही इसके इर्द–गिर्द घूमता नजर आता है। ऐसे में कहा जा सकता है एआरटी महिलाओं के जीवन और दिनचर्या में अपना असर दिखाता है। यह न केवल क्रिया–कलाप में दखलंदाजी करता है पर पूरी तरह उनके जीवन पर हावी हो जाता है। एआरटी केवल क्लिनिक तक ही सीमित नहीं रह जाता, जिसका आपके दैनिक जीवन पर कोई असर नहीं पड़ेगा। महिलाओं के जीवन का कोई पहलू इससे अछूता नहीं रह जाता। चाहे वह उनका दिनचर्या हो या फिर काम–काज हो। इतना ही नहीं मनुष्य जीवन का एक निहायत ही निजी पहलू यानी उसके यौन संबंध पर भी इस तकनीकी प्रक्रिया का असर पड़ता है। हमेशा ऐसा लगता है मानो उन पर कोई ''नज़र'' रख रहा हो।

एआरटी की कुछ प्रक्रियाओं ने तो यौन संबंध की स्वाभाविकता और निजीपन को खत्म कर दिया है। चिकित्सकीय 'निगरानी' में यौन संबंध कितना अस्वाभाविक है

इसका अंदाजा तो लगाया ही जा सकता है। एआरटी प्रक्रियाओं का उपयोग कर रहे लोगों के लिए यौन संबंध केवल एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। उन्हें यह ब्योरा रखना पड़ता है कि कितनी बार और कब यौन संबंध कायम हुए। डॉक्टर इस ब्योरे को देखते हैं ताकि गर्भधारण करने की संभावना बढ़े। अक्सर डॉक्टर दंपत्तियों को बार–बार यौन संबंध न कर पाने के लिए दोष भी देते हैं। इन दंपत्तियों को अपने यौन संबंधों का बारीक विवरण भी देना पड़ता है जो उनके लिए जीवन के सबसे निजी पहलू पर दखलअंदाज़ी के साथ ही उनके लिए अपमानजनक भी हो जाता है।

इस प्रक्रिया से गुजरती महिलाओं का मानसिक रूप से परेशान रहना स्वाभाविक बन जाता है। एक तो उनपर गर्भधारण करने का दबाव रहता है दुसरी और उन्हे यह ख्याल भी रहता है कि उनपर 'नज़र' रखी जा रही हैं।

अनुर्वरता की अवधारणा और निदान

डॉक्टरों की अवधारणा

अधिकांश एआरटी प्रदान करने वाले डॉक्टरों ने कहा कि उनका यह मानना है कि अनुवर्रता का उपचार बढ़ता जा रहा है क्योंकि यह एक ''बीमारी'' की तरह फैल रही है। और उपलब्ध उपचारों के बारे में लोगों की जागरूकता भी बढ़ी है। हालांकि अनुवर्रता की बढ़ोतरी और उपचार की उपलब्धता से संबधित जानपदिक रोग–विज्ञान (एपीडेमियोलॉजिकल) के आंकड़ें उपलब्ध नहीं है।

अनुर्वरता के कारणों के संबंध में सभी 23 एआरटी डाक्टरों ने–पुरुष में कमी, महिला में कमी, दोनों में कमी और अज्ञात कारणों का उल्लेख किया। पुरुषों में कमी के लिए संभावित चिकित्सकीय कारणों में उल्लेखनीय हैं : 'कार्यक्षमता और संख्या के मामलों में शुक्राणुओं का निम्न स्तर; शुक्राणुओं में गति का अभाव और उनके जीवित रहने की कम संभावना; शुक्राणु आक्रतिक, नपुंसकता और अपरिपक्व वीर्यपात। महिलाओं में कमी के कुछ कारण हैं : ट्यूब का बंद होना, सामान्य या अतिशय इण्डोमेट्रियोसिस; पुअर सर्वाइकल म्यूकस, यौन संक्रमण की बीमारियां (उपचार रहित रह जाने पर); यौन अंग में टीबी; क्लेमाडिया (उपचार रहित रह जाने पर); हार्मोन संबंधी समस्या जिससे ओव्यूलेशन की समस्या और कम उम्र में रजोस्राव का रुक जाना है।

डॉक्टरों ने अनुर्वरता के लिए आज की जीवन शैली और पर्यावरण को भी ज़िम्मेदार बताया। निम्नवर्गीय पुरुषों में''घटिया शराब और बीड़ी का सेवन'' भी शुक्राणुओं की संख्या में कमी की वजह होती है। जनन अंगों में संक्रमण(पीआईडी) और शुक्राणु

की संख्या में कमी'' और ''कई महिलाओं से यौन संबंध के कारण उत्पन्न संक्रमण की कई बीमारियां,[13] तथा ''काम का तनाव'' भी अन्य कारणों में बताऐं।

पांच डाक्टरों ने तो ''देर से शादी'', ''बेहतर कॅरियर के लिए भारी प्रतिस्पर्धा'', ''गर्भधारण को टालते रहना'' और ''बच्चा पैदा करने को 30 साल की उम्र तक टालते रहना'' भी महिलाओं की अक्षमता की वजह बताई। ऐसे बयान महिला और उनकी भूमिका को लेकर वस्तुतः इस विचार से प्रेरित लगते हैं कि महिलाओं का पूरा वजूद ही मौलिक रूप से उनकी प्रजनन क्षमता के इर्द–गिर्द है। इसलिए अनुर्वरता से प्रभावित महिलाओं के साथ यह पूर्वाग्रह बना रहता है कि वह मातृत्व की अपनी ''स्वाभाविक'' भूमिका का निर्वाह नहीं कर रही हैं।

महिलाओं की धारणा और उनके अनुभव

साक्षात्कार में शामिल 25 में 3 महिलाओं ने कहा कि उन्हें अनुर्वरता के जो कारण बताया गया है वह पुरुषों में कमी (शुक्राणुओं की संख्या और गतिशीलता में कमी) हैं। 10 महिलाओं ने बताया कि उनमें कमी बतायी गयी है। 3 महिलाओं ने कहा कि पति–पत्नी दोनों में कमी बताई गई है। 7 महिलाओं ने बताया के उन्हें अनुर्वरता 'अस्पष्ट कारणों' की वजह से हैं। इनमें 2 महिलाओं को तो निदान (उपचार) के संबंध में कुछ पता ही नहीं था। जिन मामलों में अनुर्वरता अस्पष्ट कारणों से बताई गई है उनमें से 1 महिला ने कहा कि पहले उसे पति में शुक्राणुओं की कमी बतायी गयी पर बाद में इसे सामान्य बताते हुए कह दिया 'पता नहीं क्या कमी है'। दूसरी महिला ने बताया कि उसे पहले तो ''अच्छी किस्म'' के अंडाणु बनने की दवा दी गई पर इसके बाद उसे बताया गया कि ''सब कुछ ठीक है।'

खर्चे के प्रति डॉक्टरों का दृष्टिकोण

ग्यारह एआरटी तकनीकी प्रदान करने वालों ने आईयूआई के खर्चा के बारे में बताया। कुछ ने सभी प्रक्रियाओं पर खर्च का ब्योरा दिया तो कुछ ने आईयूआई के पूरे पैकेज की लागत बताई। तकनीकी प्रक्रिया का खर्च 1000–2500 रु. था। इस संपूर्ण प्रक्रिया में डॉक्टर की सलाह, फॉलिकिल मॉनिटरिंग और आईयूआई के दो चक्र शामिल होते हैं और इस पर 2000–10,000 रु. का खर्च आता है।

18 डॉक्टरों ने बताया कि परखनली शिशु तकनीक (आईवीएफ) में 5000 रु. से 1 लाख रु. का खर्च आता है। डॉक्टरों ने प्रक्रिया और दवा पर खर्चों का ब्योरा दिया तो यह पता चला कि प्रक्रिया पर 20,000 से 55,000 रु. का खर्च आता है। इस प्रक्रिया पर खर्च एआरटी क्लिनिक की इस क्षमता पर निर्भर होता कि वह निःसंतान

दंपत्तियों की भावना का कैसे इस्तेमाल कर सकता है; या उनकी कमजोरियों का कितना लाभ उठा सकता है। यह बात और है कि एआरटी क्लिनिक यह दावा करते हैं कि आईवीएफ में असली खर्चा तो दवाओं पर होता है।

हालांकि जिस प्रकार इस प्रक्रिया के लिए मनमाना पैसा वसूल करने की बात पर ध्यान देना जरूरी है, उसी प्रकार यह गौर करना भी महत्वपूर्ण है कि जो डॉक्टर यह तकनीक प्रदान करते हैं, वे इस खर्च के बारे में क्या सोचते हैं; वह इसे किस नज़रिए से देखते हैं। जैसा कि एक डॉक्टर ने कहा, ''यदि किसी दंपत्ति को बच्चा चाहिए तो उपचार का खर्च भी उस पर भारी नहीं पड़ेगा। यह एक गलत धारणा है कि यह उपचार बहुत महंगा और इसलिए सबकी पहुंच से बाहर है।''

एक डॉक्टर ने कहा, ''यह उपचार बिल्कुल महंगा नहीं है। कोई भी, यहां तक कि एक रिक्शावाला भी इसके लिए पैसा जुटा सकता है। और फिर हमारी भी तो सोचिए – मेंटनेंस पर कितना खर्चा आता है। हमें अपने लिए भी तो सोचना है। सरकार क्यों नहीं ये सेवाएं देती हैं?'' इस डॉक्टर का कहना था कि सरकार दवाओं की कीमत क्यों नहीं कम कर देती है जिससे पूरी प्रक्रिया ही सस्ती हो जाएगी।

एक अन्य डॉक्टर का मत है : यह उपचार दवाओं की महंगाई के चलते अधिक महंगा हो जाता है। अतः सरकार को दवाओं की कीमत घटाने का हर संभव प्रयास करना चाहिए–वह बिक्री कर घटा सकती है, देश में ही दवा बना सकती है, या फिर सरकारी तौर पर यह तकनीकियां उपलब्ध करा सकती हैं।''

एक डॉक्टर ने बातचीत के दौरान बताया, ''दवाओं को आयात करना पड़ता है और यही वजह है कि उपचार महंगा हो जाता है। सरकार कीमत कम करने में सक्रिय भूमिका निभा सकती है। उल्लेखनीय है कि सुनामी में बहुत–से लोगों ने अपना बच्चा खोया और यह लोग पहले ही सरकारी मुहिम के तहत नसबंदी करवा चुके थे। अब सरकार को अपने परिवार नियोजन कार्यक्रम के तहत इन तकनीकियों के लाभ से इन निःसंतान हो चुके दंपत्तियों को फिर से बच्चा हो सकने में मदद करती चाहिए।''

कुछ डॉक्टरों ने तो दावा भी किया कि वे निःशुल्क ओपीडी चला रहे हैं ताकि ये सुविधाएं सभी वर्गों के लोगों के लिए सुलभ हो जाएं। एक डॉक्टर ने दावा किया कि उन्होंने गरीब दंपत्तियों के उपचार के लिए बिल्कुल 'नया तरीका' निकाला है : ''मैं कीमती दवाएं नहीं देता क्योंकि कई मरीज़ ऐसी दवाएं नहीं खरीद सकते। कुछ मेडिकल रिप्रजेंटेटिव के पास बहुत सी ऐसी दवाईयाँ होती हैं जिनकी बिक्री नहीं होती। मैं वैसी दवाएं लेकर मरीज़ों पर प्रयोग करता हूं। यह एक परीक्षण की तरह होता, हालांकि, मेरा मतलब किसी जानवरों पर किया जाने वाला परीक्षण से नहीं

है। मैं गरीब मरीज़ों को ये दवाइयां देता हूं। इस प्रकार मरीज़ और मेडिकल रिप्रजेंटेटिव दोनों खुश रहते हैं!"

एआरटी 'उपचार' की लागत का कोई मानक नहीं है। यह लोगों के कीमत चुकाने की क्षमता पर निर्भर करता है। एक ओर जहां गरीबों को 'वैसी दवाइयां दी जा रही जिनकी बिक्री नहीं' है, दूसरी ओर अमीरों से मनमानी कीमत वसूल कर उनका शोषण किया जा रहा है। हालांकि, यह हाल केवल एआरटी की फैलती दुनिया का ही नहीं है। भारत में अनियंत्रित निजी स्वास्थ्य क्षेत्र में इस प्रकार के शोषण की कोई कमी नहीं है। फिर भी यह कहना पड़ेगा कि संतानोत्पत्ति संबंधी मान्यता एआरटी कारोबार को बढ़ावा देती है। यह एक ओर निःसंतान दंपत्तियों की मजबूरी का फायदा उठाता है तो दूसरी ओर बच्चे के लिए सामाजिक दबाव को और बढ़ावा देता है।

खर्च पर महिलाओं के दृष्टिकोण

साक्षात्कार में शामिल 25 में से सिर्फ़ 18 महिलाओं ने इस प्रक्रिया के दौरान हुए खर्च के बारे में बातचीत की :

एक महिला ने कहा : "पता नहीं कितना खर्चा पड़ता है! मेरे पति ही इसका हिसाब रखते हैं। दूसरी महिला का अनुमान था, "अमेरिका की तुलना में यहां किफ़ायती उपचार है।" दो महिलाओं ने कहा आईवीएफ (एक पैकेज) पर 1,00,000 से 1,15,000 रु. की लागत आती है। हालांकि यदि प्रक्रिया शुरू करने से पहले की विभिन्न प्रकार की जांचों का भी खर्चा जोड़ जाए तो यह 2,00,000 रु. हो जाएगा।

परखनली शिशु तकनीक (आईवीएफ)–आईसीएसआई प्रक्रिया से गुजरती एक महिला ने प्रति चक्र खर्चा 1,00,000 रु. बताया। हालांकि दूसरे लगातार चक्र में खर्च 50,000 रु. घट जाता है क्योंकि अंडाणु, जिन्हें विशेष तापमान पर सुरक्षित (क्रायोप्रिजर्व) रखा जाता है, को दूसरी प्रक्रिया के लिए इस्तेमाल कर लिया जाता हैं। आईयूआई के पांच, आईवीएफ का एक और आईवीएफ–आईसीएसआई के दो चक्र करा चुकी एक महिला ने बताया कि धीरे–धीरे करके उनके अब तक 8–10 लाख रु. खर्च हो गए हैं।

दो महिलाओं के अनुसार नैदानिक जांच–पड़ताल जैसे अल्ट्रासाउण्ड, डॉक्टरों सलाह आदि पर 30,000 से 60,000 रु. खर्च हुए।

डॉक्टर जो खर्च बताते हैं उसमें सामान्यता लैप्रोस्कोपिक, अल्ट्रासाउण्ड, सलाह शुल्क, दवा एवं सुई (इंजेक्शन) की कीमत नहीं होती। इसके अलावा आने–जाने और बाहरी मरीज के शहर में ठहरने या फिर कारोबार में हुई हानियों के कारण जो खर्चा होता

है वह अलग है। ज़्यादातर महिलाओं ने इन खर्चों का भी जिक्र पूरे उपचार के खर्चे में किया, जो कि डॉक्टर नहीं बताते हैं। जैसे कि एक महिला ने कहा, "यदि आप लैप्रोस्कोपी, नैदानिक जांच–पड़ताल, दवा–सुई, यात्रा पर व्यय और इसके परिणामस्वरूप हुई कारोबारी क्षतियों का अंदाजा करें तो यह काफी महंगा साबित होता है।"

वैसे तो कहा जाता है कि आईयूआई काफी सस्ती (5,000–6,000 रु.) है, परंतु इससे पहले हुए खर्च जैसे नैदानिक जांच–पड़ताल और सलाह शुल्क को नज़रअंदाज भी नहीं किया जा सकता है। इन महिलाओं के अनुसार कुल खर्चा 30,000–40,000 रु. तक आता है।

18 में 2 महिलाओं ने कहा कि अलग–अलग शहर और अलग–अलग क्लिनिकों में खर्चे के मामले में अंतर है। इन सब बातों से पूरी प्रक्रिया पर आनेवाली उच्च लागत और इसलिए इसका सबकी पहुंच से दूर होने की बात को समझना आसान हो जाता है। आईवीएफ प्रक्रिया के लिए आई एक महिला ने कहा, "कुछ समय पहले हमारे लिए इतना खर्च कर पाना नामुमकिन था, पर पिछले साल जून में आकर हमने किसी प्रकार पैसों का इंतजाम कर लिया।" एक और महिला ने कहा, "हमने जो खर्च किया उसका कोई हिसाब नहीं रखा। सिर्फ इतना कह सकती हूं कि इसमें अपनी पूरी कमाई झोंक दी है। अगर बच्चे ही न हों तो ज़मीन–जायदाद और पैसे का क्या फायदा ?"

एक अन्य महिला ने भी कुछ ऐसी बात दुहराई : "यह प्रक्रिया बेशक महंगी हो पर इसके नतीजे के आगे पैसा कुछ नहीं है।" इस तकनीक के महंगे होने पर एक आम राय है और इसमें भी कोई शक नहीं कि यह एक महिला के हर संसाधन को प्रभावित करता हैं। मगर जब इसकी तुलना इस तकनीक के "परिणाम" (अपना बच्चा घर ले जाना) से कि जाती है तो उन्हें पैसा कुछ नहीं लगता। और एक बार जब यह विश्लेषण हो जाए कि क्या खोकर क्या पाया जा सकता है तो यह पूरी प्रक्रिया वाकई बहुत–से निःसंतान दंपत्तियों की "पहुंच" में आ जाती है।

एक महिला ने कहा, "हम इस पूरी प्रक्रिया में बेहिसाब समय, पैसा और अपनी ऊर्जा लगा रहे हैं। लेकिन एक बार अपने बच्चे को गोद में लेने के सुख से तुलना करे तो यह सब खर्च कुछ भी नहीं लगता।"

"हम पर खर्चे का बोझ नहीं पड़ा क्योंकि हम दोनों सरकारी अस्पताल में काम करते हैं जहां इलाज का पैसा मिल जाता है अन्यथा सिर्फ अमीर लोग ही इस तरह का इलाज करवा सकते हैं। यह बेशक महंगा है," एक महिला ने कहा।

सूचना की प्रकृति और सलाह

चिकित्सा के लिए आए किसी व्यक्ति को पूरी जानकारी देना, ताकि मरीज़ सोच–समझ कर निर्णय ले सके, यह चिकित्सा विज्ञान की मर्यादा का पालन करना है और इसलिए एक तरह से अनिवार्य भी है। इसमें उपचार के दौरान इसके अच्छे–बुरे प्रभावों के साथ–साथ इसके अन्य विकल्पों की जानकारी देना भी आवश्यक होता है। विशेष कर संतानहीन दंपत्तियों के मामलों में तो सलाह भी आवश्यक है क्योंकि यह बहुत नाजुक मामला होता है। ऐसे दंपत्तियों को इसके लिए भी मानसिक रूप से तैयार करना पड़ता है कि उन्हें बार–बार गर्भपात के दुःख को झेलना पड़ सकता है। अन्य दुष्परिणामों और इन प्रक्रियाओं के नकारात्मक पक्ष के बारे में बताना भी आवश्यक होता है।

डॉक्टरों का दृष्टिकोण

साक्षात्कार में शामिल 23 में सिर्फ़ 12 ने इस सवाल का जवाब दिया कि वे मरीज़ों को उपचार प्रक्रिया के संबंध में किस प्रकार की जानकारी और सलाह देते हैं। ज़्यादातर डॉक्टर केवल कुछ मामूली दुष्परिणामों की जानकारी देते हैं और गंभीर नतीजों, जैसे गर्भाशय का ऐंठना ('ओवेरियन ट्विस्टिंग') और कई अन्य दुष्परिणामों की कोई चर्चा ही नहीं करते हैं। ज़्यादातर एआरटी केंद्रों में दंपत्तियों को केवल उपचार प्रक्रिया की कुछ विस्तृत जानकारी, सफलता के आंकड़े और लागत के बारे में बताया जाता है। कुछ विशेष मामलों जैसे "थैलेसेमिया" से ग्रस्त पति–पत्नी, या जब किसी अन्य व्यक्ति का शुक्राणु या अंडाणु का इस्तेमाल होता हैं, तो सलाह भी दी जाती।

इससे यह धारणा पुष्ट होती है कि जो सूचना दी जाती है वह बहुत कम और अपर्याप्त होती है। वस्तुतः सिर्फ एक चिकित्सक ने ऊपर प्रस्तावित मानक के अनुसार पूरी सूचना देने का दावा किया। सामान्यतः मरीज़–चिकित्सक संबंध कायम रखते हुए चिकित्सक अपने आप ही यह तय कर लेते कि महिलाओं को कितनी जानकारी दी जानी चाहिए। उनका यह मानना है कि मरीज़ को पूरी जानकारी देना उनका दायित्व नहीं है। ऐसे में कठिन है कि महिलाओं को उपचार प्रक्रिया की पूरी जानकारी मिले या फिर वे निर्णय लेने के संबंध में अपनी बात कह सकें।

उपलब्ध सूचना और सलाह के संबंध में महिलाओं की राय

25 में से 10 महिलाओं ने कहा कि उपचार के संबंध में उन्हें कुछ पता नहीं क्योंकि या तो चिकित्सक बहुत व्यस्त थे या उन्हें खुद ही कुछ पूछने में झिझक थी। इनमें

8 महिलाओं ने कहा कि उन्हें केवल 'इलाज' की सफलता दर के बारे में ही बताया गया। 1 महिला ने तो यह भी कहा कि उसे साफ तौर पर बताया गया कि इस उपचार का कोई दुष्प्रभाव नहीं है एवं इससे कोई समस्या नहीं होगी।

हालांकि कुछ महिलाओं ने सूचना के अभाव के प्रति असंतोष व्यक्त किया, कुछ अन्य को लगा कि यदि उन्होंने स्वयं डॉक्टर से पूछा होता वह उन्हें पूरी जानकारी देते। पर डाक्टर से सवाल पूछने या जानकारी मांगने में उन्हें यह हिचक थी कि कहीं डाक्टर को गुस्सा न आ जाए।

पूरी सूचना के बाद सहमति

डॉक्टरों का दृष्टिकोण

23 केंद्रों में सिर्फ़ 9 ने ऐसे किसी सहमति पत्र रखने का जिक्र किया और सिर्फ़ 2 डॉक्टर सहमति पत्र दिखाने को राज़ी हुए। 3 डॉक्टरों ने कहा कि उनके केंद्र में उपलब्ध सहमति पत्र भारतीय चिकित्सा शोध परिषद (आईसीएमआर) के दिशानिर्देशों की केवल प्रति मात्र थी। शेष चार डॉक्टरों ने कहा कि उनके पास अलग–अलग प्रक्रियाओं के लिए अलग–अलग सहमति पत्र है। एक केंद्र में बताया गया कि आईवीएफ चक्र के लिए पंजीकरण से पूर्व पति–पत्नी दोनों को सहमति पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा जाता है।'' एक और केंद्र में यह सहमति पत्र अंग्रेजी और स्थानीय दोनों भाषाओं में उपलब्ध थे। दो केंद्रों में डॉक्टरों ने कहा, ''सहमति पत्र में सभी बुरे परिणामों का साफ–साफ उल्लेख है'' और ''हम तो लोगों को पूरी जानकारी देते हैं पर अक्सर वे बिना पढ़े इस पर हस्ताक्षर कर देते हैं।'' तीन एआरटी केंद्रों में डॉक्टरों ने बताया कि यह पत्र मूलतः एक स्पष्टीकरण (डिस्क्लेमर) होता है ताकि यह सुनिश्चित हो कि किसी समस्या में या अवांछित घटना हो जाने की स्थिति में क्लिनिक पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं आएगी।

महिलाओं की अवधारणा

सहमति पत्र के संदर्भ में साक्षात्कार के दौरान महिलाओं से मिली जानकारी काफी अस्पष्ट थी। 17 महिलाओं ने इस सहमति पत्र की जानकारी की बात की। 6 महिलाओं ने कहा कि आईयूआई के दौरान उन्होंने कभी भी ऐसी सहमति पत्र की बात नहीं सुनी, न ही ऐसा कोई कागज देखा था। एक महिला ने तो यह भी कहा कि उसने आईवीएफ की प्रक्रिया के लिए भी किसी सहमति पत्र पर हस्ताक्षर नहीं किया। एक अन्य महिला ने यह बताया कि आईयूआई के लिए तो नहीं, पर आईवीएफ के लिए पंजीकरण के दौरान सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किया था। कुल

मिलाकर 25 में से केवल 7 महिलाओं ने यह स्पष्ट किया कि उन्होंने पढ़ कर या सुनकर जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् ही सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किये थे।

यह पूछे जाने पर कि सहमति पत्र में क्या था 4 महिलाओं ने कहा कि उनके पतियों ने इस पर हस्ताक्षर किये थे इसलिए उनके पास इसके बारे में कोई जानकारी नहीं है, तीन ने कहा यह तो एआरटी केंद्रों की तरफ से केवल एक स्पष्टीकरण था ताकि कोई समस्या होने पर डॉक्टरों को किसी प्रकार से ज़िम्मेदार न ठहराया जाए। सिर्फ़ एक महिला ने कहा, "हां, हमने इस पर हस्ताक्षर किए थे, और स्वयं इसे पढ़ा था। इसमें संबंधित बुरे परिणामों के साथ–साथ सफलता की दर का भी ज़िक्र था। एक अन्य महिला ने कहा कि "हमने जिस सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किए वह अंग्रेजी में था, जो हम नहीं समझते थे इसलिए डॉक्टर ने हमें तेलुगु में सब कुछ समझाया। डॉक्टर ने साफ शब्दों में हमें बताया कि इन प्रक्रियों के कुछ दुष्परिणाम हो सकते हैं और सफलता की दर भी अच्छी नहीं है।"

यह प्रतीत होता है कि बहुत कम मामलों में ही एआरटी से पहले, जानकारी देने के पश्चात् महिलाओं से सहमति ली जाती है। और यदि सहमति पत्र पर हस्तक्षार किए गए हैं तो वह ज़्यादातर पतियों द्वारा किए गए हैं। सहमति पत्र पर पति–पत्नी दोनों के हस्ताक्षर के मामले नहीं के बराबर हैं। सही मायनों में सहमति लेने से संबंधी अनिवार्य जानकारियां दंपत्तियों को नहीं दी गईं हैं। इसके साथ ही सहमति पत्र की भाषा भी ऐसी थी कि लोगों के लिए समझना मुश्किल था।

एआरटी तकनीकियों की सफलता

जैसा कि एआरटी प्रदान करने वाले डॉक्टरों ने बताया

अक्सर बच्चे की जन्म दर या फिर "बच्चा घर ले जाने की दर" (अर्थात् ऐसा गर्भधारण जिसके बाद जीवित बच्चे का जन्म हो) को नहीं, बल्कि केवल प्रत्यारोपन (इम्प्लांटेशन) की दर या रासायनिक गर्भधारण (अर्थात् खून–पेशाब जांच से गर्भधारण की पुष्टि हो गई हो पर आरंभिक चरण के बाद भ्रूण का विकास नहीं हुआ हो) की दर को ही सफलता दर करार दिया जाता है। इसका अर्थ है कि एआरटी केंद्र तमाम परिभाषाओं को अपने अनुसार पेश करते हैं और इन तकनीकियों, और विशेषकर उनके प्रावधानों के प्रचार–प्रसार में इस उच्च दर का प्रयोग कर रहे हैं। जहां तक प्रत्यारोपन दर बनाम बच्चा पैदा करने की दर का सवाल है तो डॉक्टरों का कहना है अनुर्वरता का उपचार करा रही महिलाएं गर्भधारण के पश्चात् प्रसूति विशेषज्ञ के पास चली जाती हैं जिसके कारणवश उन्हें इस सफलता का, कि कितनी महिलाए बच्चा घर ले गई है का हिसाब रखना मुश्किल हो जाता हैं।

गर्भधारण और तत्पश्चात् बच्चे के जन्म की दर के बारे में बार–बार पूछे जाने पर 23 में सिर्फ़ 2 ही डॉक्टरों ने सीधे तौर पर इस दर को असली सफलता माना।

10 ऐसे डॉक्टरों ने अपने क्लिनिक में आईयूआई की सफल प्रत्यारोपन दर 15 से 50 प्रतिशत बताई। हालांकि बार–बार पूछने के बाद डॉक्टरों ने "बच्चा घर ले जाने" की दर भी बताई। 6 डॉक्टरों के अनुसार प्रत्यारोपन और बच्चा घर ले जाने की दरों में लगभग समानता थी। 1 डॉक्टर ने बताया कि उस केंद्र में बच्चा घर ले जाने की दर 8 से 12 प्रतिशत थी। 1 अन्य डॉक्टर ने तो यह दर बताना बिल्कुल उचित नहीं समझा। इस प्रकार, कुल मिलाकर, आईवीएफ से संबंधित इन सवालों के आधे–अधूरे जवाब मिलते हैं और सफलता की दर भी सही नहीं बताई जाती है।

एआरटी केंद्रों द्वारा दी गई प्रत्यारोपन और बच्चा घर ले जाने की दरों में भी बहुत फर्क होता है। इस संबंध में एक केंद्र ने यह कहा कि कई महिलाओं की अपनी लापरवाही की वजह से ऐसा होता है : "महिलाएं प्रसव के लिए अपने प्रसूति विशेषज्ञ के पास वापस चली जाती हैं" और "प्रत्यारोपन होने के बाद अपना पूरा खयाल नहीं रखतीं"।

भारतीय परिदृश्य में इन तकनीकियों की सफलता का सही अनुमान लगाना भी कठिन है क्योंकि यहां कार्यरत एआरटी क्लिनिकों के पंजीकरण की कोई केंद्रीय संस्था नहीं है, और न ही उनकी सफलता मापने का कोई एक सुनिश्चित पैमाना हैं।

एआरटी तकनीकियों के माध्यम से बच्चा पैदा करने की इच्छुक महिलाओं को इसकी संभावनाओं का सही चित्र प्रस्तुत किया जाना चाहिए। केवल चुनी हुईं सफलता दरों की बात करने से एआरटी का जो दृश्य दिखता है वह हकीकत से काफी अलग है। और जो महिला अपने डॉक्टर पर विश्वास कर के इस प्रक्रिया को अपनाती है उनके साथ भी एक प्रकार का धोखा है।

एआरटी तकनीकियों की "सफलता" के संबंध में महिलाओं के अनुभव

अब एक महत्वपूर्ण मुद्दा यह था कि महिलाएं कितनी बार (कितने चक्र) एआरटी के लिए तैयार थीं। 25 महिलाओं में 14 आईयूआई की प्रक्रिया करवा रही थीं। इनमें 5 ने गर्भधारण किया : एक ने पहले चक्र में, एक ने दूसरे चक्र में, दो ने तीसरे में और एक अपने पांचवें चक्र में गर्भधारण में सफल रहीं। तीन महिलाओं ने कहा कि वे इन प्रक्रियाओं के दो से तीन चक्रों से गुज़र चुकी हैं जबकि 4 महिलाओं ने कहा कि वे 4 से 6 चक्र करवा चुकी हैं। एक महिला तो 8 चक्र तक करवा चुकी थी परंतु किसी चक्र में भी भ्रूण प्रत्यारोपन सफल नहीं हो पाया।

शेष 11 महिलाओं ने आईवीएफ प्रक्रिया करवाई थी जिनमें से 3 का सफल गर्भधारण हुआ।

अन्य 3 महिलाओं की आईयूआई, आईवीएफ और आईवीएफ–आईसीएसआई तीनों प्रक्रियाएं हुई थीं। इनमें एक ही महिला गर्भधारण कर सकी। इन तीनों में सिर्फ़ एक, दूसरे आईवीएफ–आईसीएसआई चक्र में गर्भधारण कर सकी। हालांकि गर्भधारण से पूर्व उसे पांच बार आईयूआई, एक बार आईवीएफ और एक बार आईवीएफ–आईसीएसआई करवाना पड़ा। एक महिला को तीन बार आईयूआई और तत्पश्चात् एक बार आईवीएफ करवाना पड़ा। एक अन्य महिला ने तो दो बार आईवीएफ और उसके बाद पांच बार आईयूआई करवाया पर, सारे प्रयास विफल रहें।

महिलाओं के इस तरह बार–बार प्रयास करने के पीछे एक वजह यह हो सकती है कि डॉक्टर इन तकनीकियों की सफलता असफलता को व्यक्तिगत कारणों से जोड़ कर पेश करते हैं।

''तो क्या हुआ यदि डॉक्टर यह कह दे कि सफलता की दर यह है? अंततः सफलता या असफलता तो इस पर निर्भर करती है कि आपका शरीर कैसा है। कुछ महिलाएं आईयूआई के एक चक्र के बाद गर्भवती हो जाती हैं तो कुछ अन्य आईयूआई एवं आईवीएफ के कई चक्रों के बाद भी गर्भवती नहीं हो पातीं।

कुल मिलकार स्थिति भयावह है क्योंकि कुछ ही लोगों पर केंद्रित इस अध्ययन से भी यह साफ है कि महिलाएं बच्चा पैदा करने के लिए बार–बार इस मुश्किल प्रक्रिया से गुजरने के लिए स्पष्ट रूप से तैयार हो जाती हैं। इस प्रकार निःसंतान दंपत्ति संतानोत्पत्ति की इच्छा में इन तकनीकियों के प्रयोगों में उलझते चले जाते हैं। उनके लिए यह तय कर पाना मुश्किल होता है कि कब इन तकनीकियों को बस कह सकें या रोकें।''[14] दरअसल इस मुकाम पर आकर गर्भधारण करने की अक्षमता के साथ–साथ यह बात अधिक मन में आने लगती है कि कहीं अपनी ओर से ''कोई कसर न रह जाए या अपने प्रयास में कोई कमी नहीं रह जाए।''

स्वास्थ्य पर असर

महिलाओं पर इस उपचार प्रक्रिया और प्रयुक्त दवाओं के बहुत से दुष्परिणाम होते हैं, जिसे एआरटी क्लिनिक ने बड़ी सफाई से दबा दिये है। उनका तो बल्कि यह मानना है कि न तो उपचार प्रक्रिया और न ही दवा का कोई अधिक बुरा असर हो सकता है। इस संदर्भ में उनके कुछ कथन निम्नलिखित हैं, जो इस बात को उजागर करते हैं:

"यदि लाभ अधिक है तो जोखिम लिया जा सकता है। अनुर्वरता के उपचार में प्रयुक्त दवाओं का कोई खास बुरा असर नहीं है। छोटे–मोटे दुष्परिणाम हैं भी तो वे जीवन भर निःसंतान रहने के दुःख की तुलना में कुछ भी नहीं।"

–साक्षात्कार के दौरान एक डॉक्टर

"आईवीएफ चक्र में हारमोन के उपयोग के संबंध में कुछ अफवाह है। पर यह समझना ज़रूरी है कि ये तो प्राकृतिक हारमोन हैं जो शरीर में ही बनते हैं। इसलिए एक बार शरीर में इनका उपापचय हो जाता है और इनका कोई बुरा असर नहीं पड़ता।"

–एक आरटी डॉक्टर

एआरटी से संबद्ध सामग्रियों को गौर से पढ़ने पर पता चलता है कि महिलाओं पर इस प्रक्रिया और इससे संबंधित दवाओं का कितना बुरा असर पड़ता है। अनुर्वरता के उपचार हेतु कुछ प्रमुख दवाइयां हैं लुप्रोन, क्लोमिड, पर्गोनल आदि। इनके उपयोग के कुछ दुष्परिणाम तो स्पष्ट हैं जैसे ओवेरियन हाइपर स्टिमुलेशन सिंड्रोम (ओएचएसएस)। अत्यधिक उत्तेजना से अंडकोष में रसौली, अंडकोष का बड़ा होना, पेट के फूलने और वजन बढ़ने का डर रहता है। यदि ऐसे मामले गंभीर हो जाएं तो 'एसाइट्स', प्लियुरल इयुज़न, इलेक्ट्रोलाइट एबनार्मेलिटीज़ और मानसिक आघात भी हो सकता हैं। इससे रीनल इम्पेयरमेंट (पेशाब की परेशानी) भी हो सकती है। कलेजे का ठीक से काम न करना, और थ्रोम्बोइम्बोलिक फेनोमेना, मानसिक आघात और मृत्यु भी संभव है। गर्भाशय का ऐंठन और कैंसर की भी प्रबल संभावना होती है।

सामान्यतया प्रयुक्त दवाओं के कुछ जाने–पहचाने दुष्परिणाम हैं हॉट फ्लशेज़, पेट की बेचैनी, बच्चे के शरीर में जन्म से खाराबी, एक साथ कई गर्भ और गर्भाश्य के बाहर गर्भधारण होना, बाल झड़ना, धुंधला दिखाई देना, स्तन में बेचैनी, मानसिक तनाव, ओक्यूलर टाक्सिसीटी, इडीमा, सिरदर्द, मूड परिवर्तन, थकान, सेंजिविटी रिऐक्शन, सेक्सुअल पेरोसिटी, प्लियुरल इयूज़न, ओवेरियन सिस्ट रप्चर, आर्टेरियल थ्रोम्बोइम्बोलिज्जम, डिप्रेशन, बेचैनी, उबकाई, कै, गैस, डायरिया, भूख न लगना, लैक्टिक एसिडोसिस, सामान्य चिंता, थकान, रक्त की कमी, कलेजे या गुर्द की समस्या, पित्त की समस्या आदि।

एआरटी प्रक्रिया की जटिलताएं और खतरे भी अनगिनत हैं। लैप्रोस्कोपी से गर्भशाय, समीप के पेल्विक स्ट्रक्चर या आंत की दीवरों से खून जाने का डर रहता है। पेडू के संक्रमण का भी डर रहता है। एलर्जी से चकता, अस्थायी पक्षाघात, उल्टी, और मामला गंभीर हो जाए तो मृत्यु भी हो सकती है। इसमें एक अन्य प्रक्रिया ट्रांसवेजाइनल अल्ट्रासाउण्ड डायरेक्टेड ऊओसाइट रिकवरी (टीयूडीओआर) से अंडाणु

निकाला जाता है जिसमें तेज़ दर्द, रक्तस्राव या अंदरूनी ज़ख्म हो सकता है। पेडू के स्थान में सूजन और योनि और मूत्राशय में संक्रमण भी हो सकता है।

लेकिन साक्षात्कार में शामिल महिलाओं को इन खतरों की कोई जानकारी नहीं थी! उन्हें किसी डाक्टर ने इन चीज़ों के बारे में नहीं बताया था। डाक्टरों से दुष्परिणाम–नुकसान आदि के बारे में पूछा भी गया तो वजन बढ़ने, हॉट फ्लशेज़, कब्ज, पेट के फूलने, दर्द होने और मूत्रन आदि का उल्लेख कर दिया गया। लैप्रोस्कोपी के दौरान और बाद में कुछ दर्द की बात अवश्य बताई गई थी। हालांकि यह भी सच है कि महिलाएं और डॉक्टर दोनों इन दुष्परिणामों को मामूली मानते हैं। सभी ने साधारण बातों का ही जिक्र किया और माना कि अलग–अलग महिलाओं पर इसका प्रभाव भी अलग–अलग होता है। और फिर यह सब दुष्परिणाम, एक अपना बच्चा पाने के सामने कुछ भी नहीं है। पर सच तो यह है कि अपूर्ण या गलत सूचना देना चिकित्सा विज्ञान के दृष्टिकोण से न केवल अनैतिक है बल्कि बहुत आपत्तिजनक भी है।

होने वाले बच्चे की उम्मीद

बहुत कम महिलाओं को इस बात से फर्क पड़ता था कि लड़का होगा या लड़की, उन्हें सिर्फ़ एक बच्चे की चाहत थी, वह चाहे जो भी हो। हालांकि 9 एआरटी केंद्र जहां शुक्राणु या अंडाणु दान की सुविधा उपलब्ध है, ने शुक्राणु और अंडाणु दाता के विशेष उपेक्षित गुण या प्रकृति के बारे में बताया जो कि उपचार कर रहे दम्पंति देखते है। उनकी टिप्पणी, इस समाज के मूल्यों और इच्छाओं को व्यक्त करती है। एआरटी के माध्यम से दम्पंति के लिए इन गुणों का मिलान और चयन संभव होता दिखाई पड़ता हैं।

इस संदर्भ में शुक्राणु या अंडाणु दाता के लिए जिन विशेष गुणों के उल्लेख किये गए वह थे – 'गोरा रंग', 'सुशिक्षित' और 'अच्छी सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि'। कभी–कभी जाति और धर्म का भी उल्लेख होता है। इस अवधारणा के पीछे मूल बात यह थी कि बच्चे के आनुवांशिक गुण (जीन्ज़) अच्छे होना चाहिए। जो कि पारिवारिक और सामाजिक पृष्ठभूमि पर निर्भर करते है।

एक डॉक्टर ने कहा, "हम मरीजों को यह यकीन दिलाते हैं कि किसी रिक्शावाले का शुक्राणु नहीं लेंगे, यह किसी अच्छे परिवार के पुरुष का ही होगा।"

डॉक्टरों के मुताबिक शुक्राणु या अंडाणु के लेन–देन कार्यक्रम के दौरान दंपत्ति इस बात को लेकर परेशान रहते हैं कि बच्चा "देखने में ऐसा लगे कि वह उनके वैवाहिक संबंध का ही नतीजा नज़र आए"। वे उन गुणों की मांग करते हैं जिनको समाज में उच्च मूल्य प्राप्त होता है। हालांकि किसी ने 'डिज़ायनर बेबी' की मांग नहीं की

पर यह उसी दिशा में एक कदम प्रतीत होता है। इसके साथ इस बात की चिंता रहती है कि बाहर किसी को ये पता न चले कि गर्भधारण के लिए कृत्रिम साधन का प्रयोग किया गया है।

शुक्राणु या अंडाणु देने वालों के बारे में एक डॉक्टर ने कहा :

"कुछ ने दावा किया कि हमारे पास उच्च वर्ग की महिलाएं अंडाणु देने के लिए आती हैं। पर यहाँ यह सवाल उठता है कि कौन–से उच्च वर्ग की महिलाएं अपना अंडाणु देंगीं? घरेलू महिलाएं, जो छोटे–मोटे काम करती हैं और पढ़ी–लिखी होती हैं, ज़्यादातार वही अंडाणु देने के लिए आती हैं। इस बात का ध्यान रखा जाता है कि महिलाएं तंदुरुस्त और 35 वर्ष से कम की हों, और उसके दो बच्चे हों।"

एक अन्य डॉक्टर ने कहा :

"शिक्षित महिलाओं का अंडाणु प्राप्त करना कठिन होता है क्योंकि इसके लिए दवाएं दी जाती हैं तथा अंडाणु निकालने के लिए उन्हें बेहोश करना पड़ता है। यह एक जटिल प्रक्रिया है, इसलिए ज़्यादातर जो इससे गुज़रने के लिए तैयार होती हैं, वे गरीब परिवार से होती हैं।"

इससे यह स्पष्ट है कि समाज के गरीब तबकों की महिलाएं प्रजनन के लिए आवश्यक कच्चे माल की आपूर्ति का साधन बनती जा रही हैं। इस प्रकार एआरटी एक माध्यम बन रहा है शोषित वर्ग का और शोषण करने का।

गोद लेना विकल्प नहीं है (डॉक्टरों का दृष्टिकोण)

इस सवाल पर कि क्या निःसंतान दंपत्ति के लिए गोद लेना एक विकल्प है, कुल 23 में केवल 15 एआरटी डॉक्टरों ने जवाब दिया। उनमें भी 8 गोद लेने को अंतिम रास्ता मानते हैं जो उपचार के अन्य सभी रास्तों के बंद हो जाने पर ही अपनाया जा सकता है। हालांकि तीन अन्य डॉक्टरों ने बताया कि जो दंपत्ति गोद लेने के विकल्प के लिए तैयार हैं; वे एआरटी तकनीक के प्रयोग के लिए आएंगे ही नहीं; परंतु हम किसी दंपत्ति पर गोद लेने के विकल्प को एक रास्ते के रूप में नहीं थोपते।

दो डॉक्टरों की राय में जब शुक्राणु या अंडाणु प्राप्त करने की बात आती है तो कुछ लोग गोद लेने को उचित समझते हैं। बाकी दो डॉक्टरों ने कहा कि वे उन दंपत्तियों को गोद लेने की सलाह देते हैं जिनके लिए एआरटी प्रक्रिया का खर्च व्यय करना संभव नहीं हैं।

इस प्रकार गोद लेने का विकल्प तभी अपनाया जाता है जब कोई दूसरा रास्ता नज़र नहीं आता। गोद लेने की सलाह भी तब दी जाती है जब कोई अन्य उपचार नहीं बचता या दंपत्ति एआरटी की कीमत नहीं उठा सकते। एआरटी प्रदान कर रहे डॉक्टरो द्वारा गोद लेने के विकल्प का जिक्र न करना कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है क्योकि यही डॉक्टर एआरटी की पैरवी करते हैं, पर आश्चर्य की बात यह है कि वह दंपत्ति जो इस प्रक्रिया का खर्च नहीं उठा पाते उन्हें यह डाक्टर गोद लेने की सलाह देते हैं। जबकि ज्यादातर गोद का विकल्प न अपनाने का कारण दंपत्तियों और खासकर महिलाओं को दिया जाता है जो केवल अपने "जैविक" बच्चा चाहती हैं।

इसी सामाजिक संदर्भ में एआरटी के प्रचार–प्रसार को सही और वैध ठहराया जा रहा है जिसमें हर महिला को विवाह के बाद मां बनना है और अपने (पति) से उत्पन्न बच्चे को जन्म देना है। हालांकि कुछ मामलों में एआरटी प्रक्रियओं से उत्पन्न बच्चे सही मायनों में पूरी तरह उसी दंपत्ति से संबंधित नहीं होते, पर क्योंकि यह सब गुप्त रूप से चिकित्सा ढांचे के अंदर होता है, इसलिए सामाजिक स्तर पर मातृत्व के इस प्रतिरूप का उल्लंघन भी नहीं होता। इस प्रकार ये तकनीकियां एक "सुखी विवाहित परिवार" की छवि को बरकरार रखने में हर संभव मदद करती हैं और इस छवि को आगे भी बढ़ाती है।

गोद लेना एक विकल्प क्यों नहीं है ?

19 महिलाओं ने गोद लेने के विकल्प पर अपने विचार बांटे। इनमें से 6 महिलाएं इसे विकल्प नहीं मानतीं और इसके लिए उन्होंने विभिन्न प्रकार के तर्क रखे। दो ने कहा कि उन्होंने गोद लेने के बारे में सोचा ही नहीं क्योंकि "डाक्टर ने कभी यह नहीं कहा कि मेरे गर्भवती होने की कोई संभावना नहीं। उन्होंने कहा कि आईवीएफ प्रक्रिया से मैं गर्भवती हो जाऊंगी।"

एक महिला ने कहा, "गोद लेना हमारे लिए कोई विकल्प नहीं है। यह दिल्ली जैसे बड़े शहरों में संभव है जहां लोग एक दूसरे को नहीं जानते और न ही इस बात की परवाह करते कि कौन क्या कर रहा है। पर यदि हम जाकर बच्चा गोद ले लें तो समाज में उसकी इज्जत नहीं होगी। जीवन भर उसका तिरस्कार होता रहेगा। सब यही कहेंगे : "किस गंदगी से उठा लाए?" दो अन्य महिलाओं ने कहा कि वे गोद लेने की नहीं सोचतीं क्योंकि "उन्हें अपना बच्चा चाहिए" और "अपने बच्चे और पराये बच्चे में अंतर जरूर होता है।" एक महिला ने कहा, "क्योंकि मैं आईवीएफ के दूसरे चक्र में ही गर्भवती हो गई सो गोद लेने का सोचा ही नहीं।"

इनमें 7 महिलाओं ने ''हर संभव विकल्प को आजमाने'' की चाहत जताई। एक अन्य महिला ने इस संदर्भ में यह कहा, ''हमने अभी तक गोद लेने की नहीं सोची है। हम इतने बूढ़े तो नहीं, हमारे पास अभी प्रयास करने का समय है। फिर हम गोद लेने के बारे में सोचें भी क्यों ! अब तक किसी डाक्टर ने नहीं कहा है कि हम अपने बच्चे के मां–बाप नहीं बन पाएंगे। इसलिए हम अंत तक पूरा प्रयास तो कर लें फिर गोद लेने के बारे में सोचेंगे।

छह अन्य महिलाओं, जिन्होंने कभी गोद लेने के बारे में सोचा था, में तीन ने कहा वे तो गोद लेने के विषय में सोचने के लिए तैयार थीं पर उन्हें अपने पति और परिवार का समर्थन नहीं मिला। कुछ महिलाओं ने कहा कि वे गोद लेने की इसलिए नहीं सोचती क्योंकि उस बच्चे को सामाजिक तिरस्कार और बहिष्कार का सामना करना पड़ेगा।

एक महिला ने कहा, ''हमारे पास न तो पैसा है, न ही हम ऐसी मानसिक स्थिति में हैं कि एक और आईवीएफ करवाएं। इसलिए हम एक बच्चा गोद लेने के बारे में सोच रहे हैं। यहां उपचार पर पैसा व्यय करने से बेहतर एक बच्चा गोद लेना है और उस बच्चे पर पैसा खर्च करना है।''

दूसरी महिला ने कहा, ''दूसरी बार आईवीएफ असफल होने के बाद हमने सोचा कि बच्चा गोद लेने के लिए किसी संस्था में अपना पंजीकरण करवा लेंगे, क्योंकि गोद लेने कि प्रक्रिया में समय लग जाता है और साथ ही साथ इलाज आगे चलाते रहेगें।''

एक अन्य महिला ने बच्चा गोद लेने के असमंजस को बताया, ''हमने गोद लेने के बारे में सोचा तो है। किसी को कोई एतराज भी नहीं था। लेकिन मैं स्वार्थी कारणों की वजह से ऐसा नहीं करना चाहती। मैं बच्चा तो गोद ले लूंगी क्योंकि मेरा अपना बच्चा नहीं है पर मन में यह भावना हमेशा रहेगी कि यह मेरा बच्चा नहीं है। हम एक संयुक्त परिवार में रहते हैं और हमारा बहुत बड़ा कारोबार है। इसलिए मैं नहीं चाहती कि वह बच्चा ऐसे माहौल में बड़ा हो जहां सब उसे अपने से दूर कर दें, क्योंकि वह हमारे वंश का नहीं है। और फिर गोद लेने की प्रक्रिया भी इतनी आसान नहीं है। आपको कैसे पता चलेगा कि बच्चे में कोई गंभीर बीमारी तो नहीं ? मेरे कहने का यह मतलब नहीं कि लोग मानसिक रूप से बीमार बच्चों को नहीं अपनाते, पर मैं ऐसा करने की स्थिति में नहीं हूं, इसलिए यह कैसे विश्वास होगा कि जिस बच्चे को मैं गोद ले रही हूं, उसे थैलेसिमिया नहीं है? इन सभी बातों पर सोचना पड़ता है। आपको लगता होगा कि मैं स्वार्थी हूं पर हम सभी मनुष्य हैं और यह उत्तरजीविता का सवाल है। हमें कम–से–कम यह तो संतोष होगा कि हमने अंत तक प्रयास किया। ऐसा नहीं करने से यह भावना रह जाएगी कि शायद कुछ और प्रयास करते तो हमारा भी अपना बच्चा होता और इस हीन भावना के साथ मैं जीवन भर नहीं रहना चाहती।''

अधिकांश महिलाएं अपने "जैविक बच्चे" को जन्म देना चाहती हैं और उन्हें उम्मीद है कि एआरटी से यह संभव है जैसा कि डाक्टर भी दिलासा देते हैं। कुछ लोगों के लिए गोद लेना अंतिम रास्ता था तो कुछ अन्य इसे विकल्प ही नहीं मानते। पर जिन महिलाओं ने इसके बारे में सोचा था, वे अभी भी अपने विश्वास/आस्था और सामाजिक मान्यताओं से जूझ रही थीं। और फिर एआरटी प्रदान करने वालों द्वारा दी गई उम्मीद कि यदि वे प्रयास करते रहें तो उनका खुद का बच्चा होगा। यह आशा उन्हें इस प्रक्रिया से गुज़रने की प्रेरित करता रहता हैं। बहरहाल, गोद लेने पर यह विचार इस आधार पर पुख्ता नहीं माना जा सकता कि यह विचार सिर्फ उन महिलाओं का है जो या तो एआरटी से गुजर रही थीं या फिर एआरटी का निर्णय ले चुकी थीं। अगर गोद लेने का विकल्प को देखे तो वह एक हद तक अनुवर्रता से जूड़ जाता है, जिसमें यह मान लिया जाता हैं कि गोद लेने वाले दंपत्ति खुद मां–बाप बनने में अक्षम हैं। गोद लेने के विषय में 'खून के रिश्ते', "वंश" और "वैधता" के सवाल भी रुकावट पैदा करते हैं। गोद लेने की प्रक्रिया के संबंध में जानकारी का भी अभाव है। इन सब के अलावा सदैव यह ग्लानी रहती है कि अपने बच्चे के लिए पुर्ण रूप से कोशीश नहीं की जिससे एआरटी प्रदान करने वाले और बढ़ावा देते है यह आशा दिखा कर कि अगर लगातार प्रयास किया जाए तो "सफलता" (अपना बच्चा होने कि) जरूर मिलेगी।

एआरटी का व्यावसायीकरण

आज भारत में चिकित्सा पर्यटन के तहत दी जाने वाली सेवाओं की सूची में एआरटी नवीनतम सेवा है। उर्वरता बाज़ार भी प्रतिदिन बढ़ते चिकित्सा पर्यटन में पीछे नहीं रहा है। गौरतलब है कि यह बाज़ार विकासशील देशों में तेज़ी से बढ़ रहा है, विशेष कर भारत में, क्योंकि भारत में इन प्रक्रियाओं पर आने वाला खर्च विकसित देशों की अपेक्षा बहुत कम है।

1. इसके बावजूद कि एआरटी सफलता की दर बेहतर से बेहतर परिस्थिति में भी 30 प्रतिशत से कम है, उर्वरता बाज़ार तेज़ी से बढ़ रहा है। निःसंतान मां–बाप बनने की चाहत में दर–दर भटक रहे हैं और एआरटी क्लिनिक इसी का फायदा उठाती है। तेज़ प्रचार–प्रसार और विज्ञापनों के ज़रिये बड़े–बड़े दावे किए जा रहे हैं। ऐसे में इन बेसहारों का फंसना लाजिमी है। और इस प्रकार नीति को ताख पर रख, तकनीकी का इस्तेमाल करते हुए संतानोत्पत्ति की इच्छा (या फिर दबाव) में रह रहें दंपत्तियों को लूटा जा रहा है।

2. अध्ययन के दौरान हम एक ऐसे एआरटी क्लिनिक में पहुंचे जहां गरीबों को एआरटी सुविधा मुहीया कराने का तो एक अनोखा उपाय दिखा। वहां के डाक्टर द्वारा बताया गयाः "मैं कीमती दवाइयां नहीं देता। कई मरीज़ नहीं

खरीद सकते। दरअसल हमारे यहां आनेवाले मेडिकल रिप्रजेंटेटिव के पास कुछ दवाइयां होती हैं जिनकी बाजारों में अच्छी मांग नहीं होती। मैं उन्हें लेकर गरीब मरीजों पर जांचता हूं। यह एक परीक्षण की तरह अवश्य होता है, पर इसे जानवरों पर की गई दवा जांच की तरह ही कह सकते। इसके दो फायदे हैं। एक तो गरीब मरीज़ों को सस्ते में इलाज मिल जाता है दूसरा, मेडिकल रिप्रजेंटेटिव भी खुश हो जाते हैं।

3. पर इस बाज़ार में शोषण तो दोहरा, यानी अमीर–गरीब दोनों का होता है! गरीबों का शोषण यों कि जो "दवाइयां बाजारों में नहीं बिकती" उन्हें दिया जाता है। (यहां सवाल उठता है दवाईयां बाज़ार में क्यों नहीं बिकतीं?) दूसरा, अमीरों का, जो कि वह कीमत चुकाते जो बेशक फिजूल है।

4. निःसंतानों को इन तकनीकियों के चक्र में फंसाने की बकायदा सोची–समझी योजना कार्यरत है। एआरटी क्लिनिक विज्ञापन एवं बाजार विस्तार पर पूरा ध्यान देते हैं। पत्र–पत्रिका और प्रचार–प्रसार के इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से भरपूर प्रचार–प्रसार किया जाता है। और इन सबसे महत्वपूर्ण है इंटरनेट या वेबसाइट जिससे दुनिया भर के 'दुखियारों' यानी संभावित ग्राहकों के पास बड़ी आसानी से किफायती और गोपनीय ढंग से पहुंचा जा सकता है। कई विज्ञापन रोचक अंदाज में लुभावने होते जैसे :

ज़िंदगी उत्तमता की हकदार है, हम आपके बच्चें पैदा करने की ज़रूरतों को पूरा करने की कोशिश करते हैं।

"जिंदगी में चाहिए वह सब जो अच्छा हो, हम कोशिश करते कि आपका भी अपना एक बच्चा हो।"

"क्या अपने बच्चे की चाहत रह गई अधूरी! तो आपकी खोज यहां खत्म होती है।"

–अंग्रेजी कहावत का अनुवाद
– एआरटी क्लिनिक के विज्ञापन

एआरटी उद्योग ने साथ ही नई वस्तुओं और आर्थिक समीकरणों को जन्म दिया है, जहां प्रजनन से जुड़े शरीर के अंग जैसे अंडाणु, शुक्राणु, गर्भ पात्र भी बिक्री या किराये पर दिए जा सकता है इस सब में औरत का शरीर एक वस्तु बन जाता है जहां अंडा, शुक्राणु, गर्भ पात्र को एक औरत बेचती और दूसरी और बच्चा चाहने वाले इनको खुले बाज़ार से खरीदते हैं।

तरह–तरह के विज्ञापन, वेबसाइट, ब्रोशर, पर्चे आदि एआरटी उद्योग के प्रचार के महत्वपूर्ण माध्यम बन गए हैं। ये स्पष्ट रूप से मानव शरीर को "बिक्री का सामान" या फिर "किराये पर उपलब्ध" वस्तु के रूप में दर्शाते हैं। पर महिलाओं पर इन तकनीकियों का क्या असर होगा इस पर कोई विचार नहीं होता। महिलाओं के शरीर तमाम तकनीकी दखलअंदाज़ियां और दवाओं का प्रयोग झेलतीं हैं मानो वे मानव नहीं गायना पिग (जिस पर प्रयोग किया जाए) हों। तो क्या एक महिला शरीर एक साधन भर रह गया ताकि कोई दूसरी महिला सामाजिक रूप से "सार्थक" (मां) हो सके।

एआरटी तकनीकियां एक बच्चे को जन्म देने से कुछ अधिक भी करती हैं। एआरटी बच्चे की चाहत .के साथ–साथ मनपसंद सर्वगुण संपन्न बच्चे की इच्छा भी उजागर करता है। यहां 'यूजेनिक्स' के साथ–साथ 'डिज़ाइनर बच्चों' का मामला सामने आता है। इस लिहाज़ से इस अध्ययन में शामिल अधिकांश एआरटी क्लिनिक शुक्राणु–अंडाणु देनेवाले (डोनर) और लेनेवाले के बीच गुणों का मिलान किया करते हैं। त्वचा का रंग, बाल, कद, आंखों का रंग और फिर सामाजिक व आर्थिक हैसियत – ये तमाम बातें विचाराधीन हो जाती हैं। कई मामलों में धार्मिक परिपेक्ष्य भी महत्वपूर्ण बन जाता है। कुल मिलाकर देखा गया कि पसंद–नापसंद वही गुण थे जो समाज में महत्वपूर्ण हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि किसी सुपरमार्केट से बतौर "स्पेशल ऑफर" बच्चा खरीद सकते हैं। यह मानव जीवन के बाज़ारीकरण की चरम सीमा है। 'डिजायनर शिशु' उपलब्ध हो तो उसके लिंग का चुनाव भी लाज़मी और ज़ोर पकड़ता नज़र आता है। तकनीकियों का दुरुपयोग लिंग के चयन करने में एक चिंता का विषय है।

नैतिक समस्याएं और नियंत्रण तंत्र

डोनर इनसेमिनेशन, ऊओसाइट डोनेशन, स्पर्म डोनेशन या आईवीएफ से संतानोत्पत्ति से भारी नैतिक दुविधा स्वाभाविक है। "तीसरे व्यक्ति" की भागीदारी से किसी दंपत्ति का माता–पिता बनना उनके संबंध को एक नया मोड़ दे सकता है। आगे चलकर जब बच्चे को अपने अस्तित्व का पता चलेगा तो उसका अपने माता–पिता से रिश्ते पर असर पड़ सकता है। यहां सवाल बच्चे के आनुवांशिक साख का ही नहीं है। यहां तो कई अन्य आनुवांशिक संपर्क सूत्रों को छिपाने और कई अन्य को प्रचारित करने का पहलू है जो एआरटी को विवाद के कटघरे में ला खड़ा करता है।

शुक्राणु–अंडाणु का दान यदि परिवार के सदस्य करते हैं तो मुमकिन है कि उन्हें ज़बदस्ती या संवेगात्मक तरीके से दान करने के लिए राज़ी किया गया है।

अंडाणु दानकर्ता सामान्यतया गरीब तबके की महिलाएं होती हैं जबकि दान लेने वाली महिला सामाजिक व आर्थिक रूप से उन्नत होती हैं। ऐसे में भारत जैसे देश

में जहां पैसे की तंगी के कारण मानव अंगों की खरीद–बिक्री तेजी से होती है वहां एआरटी गरीब महिलाओं का शोषण करने का एक साधन बन सकता है।

एआरटी तकनीकियों का प्रतिदिन विस्तार हो रहा है। यह एक बड़ा बाजार बन गया है। अतः 'एआरटी क्लिनिक' के कारोबार पर जांच और नियंत्रण आवश्यक है ताकि बाज़ार की प्रतिस्पर्द्धा में संतानोत्पत्ति के इच्छुक दंपत्तियों का शोषण न हो और नैतिक आचरण पर भी सवालिया निशान न लगे। लेकिन यहां एआरटी क्लिनिक के लिए किसी राष्ट्रीय पंजीकरण का प्रावधान नहीं है फिर कौन कह सकता है कि ये क्लिनिक सुरक्षित और मर्यादित रूप में तकनीकियां प्रदान कर रहे हैं। सच तो यह है कि एआरटी के मार्गदर्शन के नाम पर भारतीय चिकित्सा शोध परिषद के दिशानिर्देश नाममात्र हैं, जो कतई कानूनी रूप से बाध्य नहीं कर सकते।

आईसीएमआर ने एआरटी के मुद्दे पर ध्यान दिया है पर वह सीमित है क्योंकि इन तकनीकियों के सामाजिक एवं नैतिक दुष्परिणामों पर प्रायः उनका ध्यान नहीं है। इसलिए उनके द्वारा दिए गए मार्गदर्शन कई मामलों में समस्याजनक है।

एक तो यह कि इस मार्गदर्शन में एआरटी तकनीकियों को एक साधन माना गया है जिसके माध्यम से लोगों को नसबंदी के लिए मनाया जा सके। इसके पीछे विचार यह है कि यदि लोगों को विश्वास हो जाए कि मौजूदा बच्चों की दुर्भाग्यवश मृत्यु हो जाए तो एआरटी से और बच्चे पैदा किए जा सकते हैं। इसका सीधा अर्थ है कि जनसंख्या नियंत्रण में लगे लोगों के हाथ एआरटी एक कारगर हथियार होगा। वे इसके माध्यम से बंध्याकरण की मुहिम चला सकते – एक व्यापक उद्देश्य की पूर्ति कर सकते हैं। एक अन्य समस्या यह है कि इस मार्गदर्शन में सिर्फ विवाहित महिलाओं को एआरटी का ग्राहक माना गया है। समलैंगिक संबंध में रहते पुरुष एवं महिलाएं या फिर एकल महिलाओं पर पूरे दस्तावेज़ में एक शब्द भी नहीं कहा गया है। इस अध्ययन में शामिल एआरटी क्लिनिक में भी साफ तौर पर बताया कि सिर्फ विवाहित महिलाओं को इन तकनीकियों का लाभ दिया जा सकता है।

नियंत्रण की स्थिति

एआरटी ने भारत में उत्तरोत्तर अपनी पकड़ मजबूत कर ली है। अब न केवल बड़े–बड़े महानगरों बल्कि छोटे–छोटे शहरों में भी इसका उपयोग दिन–ब–दिन बढ़ता जा रहा है। बावजूद इसके, एआरटी सुविधा मुहैया कराने वालों पर कानूनी रूप से बाध्यकारी नियंत्रण की कोई व्यवस्था नहीं है। इस क्षेत्र में दिशानिर्देश के नाम यदि कुछ है तो वह है भारत में एआरटी क्लिनिकों की मान्यता, निगरानी और नियंत्रण संबंधी भारतीय चिकित्सा शोध परिषद के दिशानिर्देश। इस दिशानिर्देश में

एआरटी संबंधी जो भी निर्देश हैं वे कई मायनों में अपने–आप में विरोधाभासपूर्ण, समस्याजनक हैं जिन्हें कानूनी रूप से लागू करना मुश्किल कार्य हैं। एवंम एआरटी के क्षेत्र में लगे लोग इन निर्देशों का कतई पालन नहीं करते।

इस दिशानिर्देश (1.6.4) में सबसे पहले कहा गया है कि "आईवीएफ संतानोत्पत्ति संबंधी दवा का थिरैप्युटिक (उपचार करने का) विकल्प है जो प्रत्येक प्रयास में सर्वाधिक सफल साबित होता है। अक्सर यह बिल्कुल वैसा होता है जैसा सामान्य गर्भधारण में देखा जाता है।" यहां 'थिरैप्युटिक' शब्द का प्रयोग सही नहीं हैं क्योंकि जैसा कि बार–बार बताया जा चुका है एआरटी सही मायनों में अनुर्वरता का उपचार नहीं करती, बल्की ऐसे दंपत्ति जो किन्ही कारणवश संतानोपत्ति में असक्षम है उन्हें प्रजन्न में सहायक मात्र है। आईवीएफ के संबध में यह प्रचारित है कि यह तकनीक की सफलता सबसे अधिक है जो सही मानयों में बिलकुल सच नहीं है। सच तो यह है कि आज भी सिर्फ 20 से 30 प्रतिशत तक महिलाएं अपना बच्चा घर ले जा पाती हैं। इसलिए यह दावे न केवल दंपत्तियों को सपने दिखाकर गुमराह करते है बल्कि महिलाओं के शरीर पर चिकित्सकीय संस्थानों के अतिरिक्त अत्याचार को भी बढ़ावा देते हैं।

एआरटी की इच्छुक महिलाओं के लिए भारतीय चिकित्सा शोध परिषद ने कुछ दिशानिर्देश दिए हैं। ये मूलतः उन नैतिक मूल्यों पर आधारित हैं जो इन तकनीकियों का इस्तेमाल करती महिलाओं से उम्मीद किये जाते है। यह, यह मानकर चलते है कि दंपत्ति विवाहित हो, पर न तो समलिंगी हो और न ही उसकी दो पत्नियां (पति) हो। समलैंगिक और एकल महिला का ज़िक्र इस दस्तावेज़ में नहीं किया गया है। इस दिशानिर्देश में जिन समान्य दायरों में यौन संबध (विवाहित दंपत्ति) की परिकल्पना की गई है, दिशानिर्देश में इस्तेमाल शब्दो से स्पष्ट हो जाता हैं। इस दस्तावेज़ में जो शब्दों का इस्तेमाल है वह ज्यादातर "पति", "पत्नी" हैं, कहीं–कहीं पर "पार्टनर" शब्द का प्रयोग भी नाममात्र के लिए किया गया हैं।

महिलाओं की कुछ श्रेणियों को इस दायरे से बाहर रखने के साथ–साथ ये दिशानिर्देश महिलाओं को गैर–मानवीय स्थिति में ला खड़ा करते है जहां उन्हें एआरटी की सुविधा से वंचित कर दिया जाता। अनुभाग 3.16.2 में उल्लेख है : "पति की सहमति से किसी विवाहित महिला द्वारा एआरटी का इस्तेमाल करना उस पत्नी या डोनर (शुक्राणु देने वाले) के लिए अवैध संबंध नहीं है। हालांकि पति की सहमति के बिना ऐसी कोई मदद तलाक या कानूनी रूप से अलग होने का आधार बन सकता है।" (अनुभाग 3. 16.19) यह महिला की प्रजनन क्षमता और उसके यौन संबंध पर पुरुषों के स्वामित्ता की पुष्टि है; जो सदियों से व्याप्त असमानता को बढ़ावा दे रही है।

भारतीय चिकित्सा शोध परिषद के दिशानिर्देश (3.16.1) कहता है कि ''एआरटी से उत्पन्न बच्चा दंपत्ति के वैवाहिक संबंध से उत्पन्न वैध संतान माना जाएगा, जिसमें पति–पत्नी दोनों की सहमति थी और बच्चे को मां–बाप के सभी अधिकार, समर्थन और पुश्तैनी अधिकार प्राप्त होगें। कानूनी रूप से वैध संतान का अर्थ होता है विवाह से उत्पन्न संतान। इस अवधारणा की सबसे पहले समस्या तो यह है कि विवाह से उत्पन्न संतान को ही कानूनी रूप से वैध माना जाता है। इससे बच्चे का ससम्मान जीने के अधिकार का उल्लंघन होता है। इतना ही नहीं, यह अकेली महिला/पुरुष और समलैंगिक संबंध के लोगों को एआरटी के इस्तेमाल से वंचित रखता है।

दिशानिर्देश के एक अन्य अनुभाग में कहा गया है कि ''संतानोत्पत्ति में अक्षम दंपत्तियों के उपचार में सलाह और सघन जांच के बाद एंआरटी के इस्तेमाल का प्रावधान होगा, जिसके असफल होने के बाद गोद लेना ही एक विकल्प बच जाता है।'' यह इस बात का द्योतक है कि भारतीय चिकित्सा शोध परिषद भी 'जैव मां–बाप' की अवधारणा को अधिक अहमियत देता है, अतः एआरटी को बेहतर विकल्प समझा जाता है। गोद लेने को दोयम दर्जा प्राप्त है, जिस पर एआरटी के असफल होने के बाद ही विचार किया जाने का ज़िक्र हैं।

भारतीय चिकित्सा शोध परिषद के दिशानिर्देशों वैचारिक पक्षपात पर आधारित हैं और उसे बढ़ावा देने वाले, की आलोचना इस आधार पर भी की जा सकती है कि इसमें नियंत्रण संबंधी कोई निर्देश नहीं है।

भारतीय चिकित्सा शोध परिषद के महानिदेशक के अनुसार, ''भारत में एआरटी के चलन, ऐसे क्लिनिकों के प्रमाणीकरण और उनके कार्य प्रदर्शन पर निगरानी के लिए कोई दिशानिर्देश नहीं हैं। यह दस्तावेज़ इस कमी को दूर करने का लक्ष्य रखता है और भारत में एआरटी क्लिनिकों की राष्ट्रीय पंजी बनाने का साधन देता है। हालांकि यह सूचना नहीं है कि इन क्लिनिकों के पंजीकरण और प्रमाणीकरण की प्रक्रिया वाकई शुरू हो गई है। और यदि ऐसा है तो महिलाओं को इसकी जानकारी देने के लिए भारतीय चिकित्सा शोध परिषद क्या करने की योजना रखती है। अब सवाल यह उठता है कि कौन प्राधिकरण या निकाय एआरटी क्लिनिकों को प्रमाणित करेंगे? और फिर भारतीय चिकित्सा शोध परिषद कैसे यह सुनिश्चित करे कि महिलाएं मान्यता प्राप्त या प्राधिकृत क्लिनिक में ही सहायता के लिए जाएं ?

हालांकि भारतीय चिकित्सा शोध परिषद के निर्देशानुसार से अधिकतम 3 भ्रूण निकाले जा सकते हैं और महिलाओं को भ्रूण के भावी उपयोग (1.6.8.2) पर सूचना दी जानी चाहिए। लेकिन प्रक्रिया पर निगरानी का कोई स्पष्ट निर्देश नहीं है और न ही इस पर कि कितनी बार भ्रूण निकाले गए। दरअसल यह पूरी प्रक्रिया एआरटी क्लिनिक

की चारदीवारियों तक सीमित रहती है। महिलाओं को यह पता नहीं चलता है कि कितनी बार भ्रूण निकाले गए या उनका क्या हुआ। इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि कई भ्रूण निकाल लिए जाएं और उन्हें बेच दिया जाए या उस महिला की बिना सहमति या जानकारी भ्रूण का इस्तेमाल शोध कार्य हेतु किया जाए। इस बात की पुष्टि एआरटी सुविधा मुहैया करवाने वालों से साक्षात्कार के दौरान हुई जब पता चला कि क्लिनिकों ने 5 से 16 तक अंडाणु निकाले थे। एक डाक्टर ने तो एक बार में ही 35 अंडाणु निकाले जाने की बात कही।

हालांकि अनुभाग 3.5.9 एवं 3.5.10 में उल्लेख है कि एआरटी क्लिनिकों में पीजीडी या अन्य माध्यम से बच्चे का लिंग चुनने का विकल्प नहीं है परंतु यह सुनिश्चित करना नामुकिन हैं। लड़की को जन्म लेने से रोकने के लिए एआरटी तकनीक के प्रयोग की संभावना प्रबल है, जो चिंता विषय है।

दिशानिर्देश के अनुभाग 3.5.13 और 3.5.14 में यह उल्लेख है कि ''क्लिनिक और दंपात्ति को इसका पूरा अधिकार है कि उन्हें शुक्राणु (या अंडाणु) देने वाले की पूरी जानकारी मिले जैसे की ऊंचाई, वजन, त्वचा का रंग, शैक्षणिक योग्यता, पेशा, पारिवारिक पृष्ठभूमि।'' यह बात ऊपरी तौर पर सामान्य लगती है क्योंकि मां–बाप चाहेंगे कि बच्चा उनकी तरह दीखे, पर गुणों के इस कदर चुनाव की संभावना से एक बेहतर नस्ल के बच्चे की चाहत (यूजेनिक्स की प्रवृत्ति) जन्म ले सकती है। यह भारत सरीखे देश में बहुत खतरनाक हो सकती है क्योंकि यहां जात–पात, धर्म आदि के मूल्य बहुत गहरे हैं। यह दस्तावेज़ इस पर चुप है कि क्या भारतीय चिकित्सा शोध परिषद ने एक बेहतर नस्ल के बच्चे की चाहत (यूजेनिक्स की प्रवृत्ति) के मुद्दे पर कुछ सोचा है या इसे कोई समस्या ही नहीं मानता।

1 प्रस्तावना पृ. गपअ

निष्कर्ष

यों तो सन् 1980 के दशक से ही भारत में एआरटी अपना पांव पसार रहा है पर अचरज की बात यह है कि देश में जारी सामाजिक आंदोलनों में एआरटी के मुद्दों पर कोई सुनियोजित कार्यक्रम; कोई विचार–विमर्श नहीं है। महिला आंदोलनों में गर्भनिरोध के मुद्दों को तूल दी जाती रही है। पर जहां तक तकनीकी हस्तक्षेप के विरोध का सवाल है, बात लिंग परीक्षण तक सीमित है। दरअसल एआरटी के मुद्दा को दरकिनार किए जाने के पीछे कई कारण हैं। भारत में जारी विभिन्न आंदोलनों के कार्यकर्ताओं से बातचीत के सिलसिले में जो बातें निकल कर बाहर आईं उन्हें निम्नवत सूचीबद्ध किया गया है :

"तकनीकी का प्रचार–प्रसार सीमित"

"एआरटी क्लिनिक मूलतः शहरी क्षेत्र तक सीमित"

"मोटे तौर पर निजी क्षेत्र में सीमित"

"प्राप्त एपीडेमियोलॉजी के अनुसार सिर्फ़ 5 प्रतिशत लोग अनुर्वर (गर्भधारण में अक्षमता)"

देश में जारी तरह–तरह के आंदोलनों से यहां के लोग (कार्यकर्ता) हिंसा, भेदभाव और शोषण की भाषा भली–भांति समझते और तदनुसार विरोध करते हैं। हालांकि एआरटी एक ऐसा विकल्प है जो व्यक्तिगत चुनाव पर आधारित है और इसलिए सामाजिक नहीं बल्कि व्यक्तिगत या निजी लगता है। ऐसे में किसी को शोषित/पीड़ित कहना मुश्किल है। और एआरटी के मुद्दों को तूल देने के लिए यह ज़रूरी हो जाता है कि हम इनके सामाजिक, तकनीकी और संबद्ध बाज़ारवाद के पहलू को समझें; और यह समझें कि वे किस प्रकार परस्पर मिलकर महिलाओं का शोषण कर सकते हैं।

कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि एआरटी संबंधी मुद्दों पर भारत में कोई विचार नहीं हुआ है। कुछ समूहों[1] ने इस दिशा में कार्य किया है। ऐसे ही एक समूह के एक सदस्य ने भारत में एआरटी को लेकर भारतीय चिकित्सा शोध परिषद के दिशानिर्देशों की आलोचना करते हुए कहा, "यह (दिशानिर्देश) एक ऐसा दस्तावेज़ लगता है जो महज एक व्यवसाय विशेष के नियंत्रण की बात करता हुआ प्रतीत होता है। इसमें इस मुद्दे पर एक नैतिक रूपरेखा देने जैसी कोई बात नहीं है।"

एक अन्य दस्तावेज़, वी एण्ड आवर फर्टिलीटी'[2] में गर्भधारण तकनीकियों को गर्भनिरोध तकनीकियों के सिलसिले में ही देखा गया है। इससे सोच की एक अलग दिशा मिलती है जिससे एआरटी को आलोचना के दृष्टिकोण से देखने में सक्षम होते हैं। इस दस्तावेज़ से एआरटी की हमारी समझ पुष्ट होती है।

1 सहेली वीमेंस रिसोर्स सेंटर, आईसीएमआर ड्राट गाइडलाईंस फॉर एसिस्टेड रिप्रोडक्टिव टेकनोलाज़ीज़ : ए क्रिटीक एण्ड सम रिकमेंडेशंस, नवंबर 2002 और सामा रिसोर्स ग्रुप फॉर वीमेन एण्ड हेल्थ, क्रिटीक ऑफ द आईसीएमआर गाइडलाईंस फॉर एक्रेडेशीन, सुपरविज़न एण्ड रेगुलेशन ऑफ एआरटी क्लिनिक्स इन इंडिया, जून 2006

2 चयनिका, स्वतीजा, कामाक्षी, 'वी एण्ड आवर फर्टिलीटी–द पॉलिटिक्स ऑफ टेकनोलाजिकल इंटरवेंशन', 1999

गर्भधारण में अक्षमता को सामाजिक दृष्टि से समझने का क्या कारण है? आज यही सवाल है जो महिला आंदोलन के लिए मूल रूप से महत्वपूर्ण है। साथ ही ज़रूरत है कि इन तकनीकियों ने जो सपने बुने हैं उसकी सच्चाई पर से पर्दा उठने की। इनकी सफलता दर के सच का चित्रण किया जाए। उपचार में प्रयुक्त हार्मोन संबंधी दवाओं के दुष्परिणामों पर भी चर्चा हो। और इस उपचार में लगी महिलाओं के दृष्टिकोण सुने जाएं। आज जिस रफ्तार से इन तकनीकियों का हस्तक्षेप हमारे देश की महिलाओं के निहायत निजी जीवन में बढ़ रहा है उससे ऐसा नहीं लगता कि भारत में जारी महिला आंदोलनों के लिए यह मुद्दा बहुत दिनों तक अनदेखा, अनछुआ रह पाएगा।

महिला आंदोलन के साथ–साथ सार्वजनिक विचार–विमर्श में इस मुद्दे को जगह देना ही हमारे इस अध्ययन का मौलिक उद्देश्य है; और साथ ही, एआरटी, इसके विभिन्न परिणामों और इसकी खामियों पर लोगों की जागरूकता बढ़ाना है। लोग सुशिक्षित होने के बाद ही इस तकनीकी का प्रयोग करें इसके लिए यह (प्रयास) बहुत ज़रूरी है।

अतः निम्नलिखित बिन्दुओं के मद्देनजर हम एआरटी के गंभीर विश्लेषण की मांग करते हैं :

- एआरटी के कई सामाजिक दुष्परिणाम हैं और विशेषकर महिलाएं तो इसमें पिस कर रह जाती हैं। ये तकनीकियां मौजूदा पुरुष सत्तात्मक सामाज को और मजबूती प्रदान करती हैं।

- एआरटी का अर्थ है महिलाओं के शरीर पर कई बीमारियों का खतरा।

- एआरटी के बाज़ारीकरण से महिला प्रजनन अंग भी बिक्री का सामान बन गया है जिसमें अंडाणु, गर्भ आदि खरीदे जा सकते हैं। इससे महिलाओं के शोषण के एक और द्वार खुल गए है।

- भारत में एआरटी पर कोई नियंत्रण नहीं है। अतः एआरटी तकनीकियों के कारोबार और दवा उद्योग में लगे लोग इस अवसर का लाभ उठाते हैं।

- एआरटी से विभिन्न प्रकार के नैतिक विरोध पैदा होते हैं। कुछ ऐसे मुद्दे हैं जो विरोध और असमंजस की स्थिति पैदा करते हैं जैसे महिलाओं का शोषण, एआरटी के लिए उनकी मज़बूरी और उन पर दबाव, और सिर्फ़ विवाहित महिलाओं के

लिए ही एआरटी की सुविधा का उपलब्ध होना। अतः एआरटी तकनीकियों को बढ़ावा देने से पहले इन पर विचार और आवश्यकतानुसार समाधान आवश्यक है।

- एआरटी से 'यूजेनिक' (उत्कृष्ट बच्चा पैदा करने की लालसा) का मामला भी सामने आता है, विशेषकर बच्चे के लिंग चयन में कई लोग इसका लाभ उठाना चाहेंगे।

परिशिष्ट (एनेक्सर)

इसमें एआरटी से संबद्ध कुछ तकनीकी (चिकित्सकीय) प्रक्रियाओं का संक्षिप्त विवरण है।

परखनली शिशु तकनीक (आईवीएफ)

आईवीएफ में कई प्रयोग या चिकित्सकीय जांच शामिल हैं। आईवीएफ के दौरान मोटे तौर पर महिलाओं को ''उपचार'' के निम्नलिखित चरणों से गुजरना पड़ता है हालांकि उनकी बारीकियां अलग–अलग क्लिनिकों के लिए अलग हो सकती हैं।

पहला चरण : ''मरीजों'' का चयन
किस ''मरीज'' का ''उपचार'' होगा, किसका नहीं यह तय करने के सभी क्लिनिक के अपने अलग मापदंड हैं। अधिकांशतः यह मानक आयु एवं वैवाहिक स्थिति के आधार पर तय किये जाते हैं और ज़्यादातर 40 वर्ष से कम की विवाहित महिलाओं को ''उपचार'' की सलाह दी जाती है।

दूसरा चरण : ओवेरियन हाइपर स्टिमुलेशन (ओएचएस)
अंडाशय (ओवरी) को उत्तेजित करना आवश्यक होता है ताकि वह अधिक संख्या में अंडाणुओं को पैदा कर सके। इसके लिए आईवीएफ से गुजरती महिलाओं को माहवारी के दूसरे या तीसरे दिन से प्रतिदिन क्लोमफीन साइट्रेट लेने पड़ते हैं।

नौवें दिन के आसपास महिला को एचएमजी (ह्यूमनमीनोपॉज़ल गोनैडोट्रोफिन) 1 की सुई दी जाती है। यह बाज़ार में परगोनल या ह्यूमेजोन के नाम से चलती है और फॉलिकल्स को परिपक्व (मैच्योर) होने में मदद करती है।

हार्मोन लेवल (स्तर) की जांच के लिए खून एवं पेशाब की नियमित जांच की जाती है। इससे अंडोत्सर्ग (ओव्यूलेशन) के समय का भी पता चलता है। फॉलिकल्स के आकार को मापने के लिए प्रतिदिन योनि का अल्ट्रासाउण्ड भी होता है। जब सबसे बड़ा फॉलिकल का व्यास (डायमीटर) 18 मिमी हो जाए तो एचसीजी (ह्यूमेन

कोरियोनिक गोनैडोट्रोफिन) 2 यानी बाजार में उपलब्ध प्रेगनिल या प्रोफासी दिया जाता है।

1 गोनैडोट्रोफिन दरअसल पिट्युटरी ग्लैण्ड (पीयुष ग्रंथि) में बनने और निकलने वाले कई हार्मोन में से एक है जो वृष्ण स्राव या अंडाशय पर असर करता है जिसके परिणामस्वरूप सेक्स हार्मोन और शुक्राणु या अंडाणु बनता है। (ऑक्सफोर्ड कनसाइज़ मेडिकल डिक्शनरी, 1998)

2 एचसीजी भी पिट्युटरी गोनैडोट्रोफिन की तरह है। लड़कियों में युवावस्था आने में देर होने, अनडिसेंडेड टेस्टिस, माहवारी से पूर्व के तनाव और ओव्यूलेशन की कमी के चलते अनुर्वरता के उपचार में इसकी सुई दी जाती है। (ऑक्सफोर्ड कनसाइज़ मेडिकल डिक्शनरी)

इस प्रकार इस हार्मोन से आव्यूलेशन होता है। हार्मोन उपचार की यह प्रक्रिया 17 दिनों तक चलती है।

तीसरा चरण : अंडाणु हासिल करना

24–38 घंटों के अंदर अंडाणुओं, जो विकसित हो गए, को फॉलिकिल से निकाल लिया जाता है। इस प्रक्रिया को एग–सेल पंक्चर कहते हैं। इसमें जो तकनीकियां लगाई जाती हैं उनमें एक है ट्यूडर अर्थात ट्रांस वेजाइनल अल्ट्रासाउण्ड डायरेक्टेड ऊओसाइट रिकवरी (टीयूडीओआर)। इस प्रक्रिया में अंडाणुओं को योनि मार्ग से निकाला जाता है न कि लैप्रोस्कोपी से। यह एक शल्य प्रक्रिया है और अंग विशेष को चेतनाशून्य कर पूरी की जाती है और इस प्रक्रिया में लगभग 40 मिनट का समय लगता है। इस चरण में पति या डोनर का शुक्राणु भी प्राप्त किया जाता है।

चौथा चरण : युग्मकों (गैमेट्स) का ट्रीटमेन्ट

इस चरण में शुक्राणु एवं अंडाणु का ट्रीटमेंट होता है। अंडाणु को कुछ घंटों 37 डिग्री सेल्सियस तापमान पर रखा जाता है ताकि वे इनक्युबेट/विकसित हो सकें। यदि पति (पार्टनर) ने वीर्य दिया हो तो उससे अक्रिय कोशिकाओं और वीर्य द्रव (सेमिनल लुइड) को हटा दिया जाता है ताकि वह निषेचन (फर्टिलाइजेशन) के लिए तैयार हो जाए। परंतु यदि वीर्य डोनर का हो तो शुक्राणु का चयन एवं फेर–बदल इसी चरण में किया जाता है।

पांचवां चरण : निषेचन (फर्टिलाइजेशन)

एग सेल पंक्चर की प्रक्रिया, जो ऊपर दी गई है, के कुछ घंटों के अंदर अंडाणु को शुक्राणु के साथ पनपने वाले माध्यम (कल्चर मीडियम) में एक पैट्रीडिश पर रखा जाता है ताकि निषेचन हो पाए।

छठा चरण : भ्रूण प्रत्यारोपन (एम्ब्रायो ट्रांसप्लांटेशन)
जब निषेचित अंडाणु एक से दो से चार से आठ कोशिकाओं में विभाजित हो जाती है तो वह महिला के गर्भाशय में स्थानांतरित होने के लिए तैयार है, जहां सामान्य गर्भधारण (जेस्टेशन) के अगले चरण पूरे होते हैं। भ्रूण स्थानांतरण निषेचन के तीन दिन के बाद किया जाता है। क्योंकि अंडाणु के निषेचन की संभावना बहुत कम समय तक रहती इसलिए अधिक संख्या में अंडाणु निकाल लिए जाते हैं, ताकि गर्भधारण सफल हो, और उन्हें निषेचित करवा कर सामान्यतया कई भ्रूण प्रत्यारोपित कर दिए जाते हैं। लेकिन एक से अधिक भ्रूण स्थानांतरण के कारण कई गर्भधारण की संभावना रहती है।

ऐसी स्थिति में महिला को भ्रूण घटाने की प्रक्रिया से गुज़रना पड़ सकता है।

3 ज्योत्सना अग्निहोत्री गुप्ता, न्यू रिप्रोडक्टिव टेकनोलॉजीज़, वीमेंस हेल्थ एण्ड ऑटोनॉमी, फ्रीडम और डिपेंडेंसी? सेज पब्लिकेशंस, इंडिया, 2000

इंट्रासाइटोप्लाज्मिक स्पर्म इंजेक्शन (आईसीएसआई)

यह एक ऐसी आईवीएफ प्रक्रिया है जिसमें केवल एक शुक्राणु को सीधे अंडाणु के साइटोप्लाज्म में इंजेक्ट कर दिया जाता है। पुरुष के बिल्कुल अनुर्वर होने के मामले में इस तकनीकी का इस्तेमाल होता है। इस प्रकार की अनुर्वरता के कई कारण हैं जैसे कम संख्या में शुक्राणु होना, शुक्राणु का गतिशील न होना या फिर उसमें अंडाणु के रासायनिक कवच को भेदने की क्षमता का अभाव। बंद नली के परिणामस्वरूप गर्भधारण की समस्या में भी इस तकनीकी का उपयोग होता है। पुरुषों में वीर्यपात असंभव हो तो सीधे अंडकोष से शुक्राणु प्राप्त किए जा सकते हैं।

आईवीएफ की तरह इस तकनीकी में भी अंडाणु प्राप्त किया जाता है। इसके लिए महिलाओं को ओएचएस की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है और उनके अंडाणु निकाले जाते हैं। अंडाणु निकल जाने के बाद मेसा यानी माइक्रोस्कोपिक एपिडिडिमल स्पर्म एस्पिरेशन (एमईएसए) के माध्यम से शुक्राणु निकाल लिए जाते हैं। 'मेसा' की प्रक्रिया में एपिडिडिमिस से एस्पिरेशन या शल्य प्रक्रिया के माध्यम से स्पर्माटाजोआ प्राप्त कर लिए जाते हैं।

टेस्टिक्युलर स्पर्म एस्पिरेश (टी ई एस ए या 'टेसा') में सीधे टेस्टिकल्स से शुक्राणु प्राप्त किए जाते हैं। टेस्टिक्युलर टिशू के एस्पिरेशन या शल्य प्रक्रिया से यह किया जाता है। इसके बाद फेर–बदल कर शुक्राणु चुनने के बाद शुक्राणु इंजेक्ट किया जाता है।

अंडाणु में शुक्राणु इंजेक्ट करने की प्रक्रिया एक माइक्रोस्कोप के अंदर होती है। इस माइक्रोस्कोप में फेर–बदल के लिए विशेष उपकरण लगे होते हैं। इस प्रक्रिया के बाद अंडाणु की एक कोशिका कल्चर होने के लिए लिए रख दी जाती है और अगले कई दिनों ध्यान रखा जाता है कि निषेचन हुआ या नहीं। निषेचन हो जाने पर भ्रूण को महिला के गर्भ में स्थानांतरित कर दिया जाता है ताकि आगे गर्भ का विकास हो सके।

इंट्रा युटेराइन इनसेमिनेशन (आईयूआई)

इंट्रा युटेराइन इनसेमिनेशन संतानोत्पत्ति में सहायक सबसे सरल तकनीकी है। इसमें महिला की योनि के सर्विक्स (गरदन) के पास ही शुक्राणु जमा कर दिए जाते हैं। इस प्रक्रिया में कृत्रिम इनसेमिनेशन होता है जिसके तहत या तो पति के वीर्य का इस्तेमाल होता है, जिसे आर्टिफिशयल इनसेमिनेशन हसबैण्ड्स स्पर्म (एआईएच) कहते; या फिर आर्टिफिशियल इनसेमिनेशन बाय डोनर स्पर्म (एआईडी) कहते हैं। एक माहवारी के दौरान महिला का 3–4 बार इनसेमिनेशन होता है। इंट्रा युटेराइन इनसेमिनेशन का पहला चरण अंडाशय को पूरी तरह उत्तेजित करना है जिसके लिए दवा का प्रयोग किया जाता है और इसका लक्ष्य होता है कई अंडाणुओं की परिपक्वता। ओव्युलेशन की सही घड़ी में पहले से तैयार शुक्राणुओं को दो बार गर्भाशय में प्रवेश करवाया जाता है। यह काम एचसीजी की सुई के क्रमशः 24 और 48 घंटों बाद किया जाता है। इनसेमिनेशन के बाद गर्भधारण (जेस्टेशन) के बारहवें सप्ताह तक एचसीजी (हार्मोन) की सुइयां जारी रहती हैं। पर यदि गर्भधारण की जांच का नतीजा नकारात्मक निकल आए तो सुई बंद कर दी जाती है।

अंतिम टिप्पणी

1. उदाहरण के लिए देखें, जेन कोरिया, द मदर मशीन : रिप्रोडक्टिव टेकनोलॉज़ीज़ फ्राम आर्टिफिशयल इनसेमिनेशन टू आर्टिफिशियल वोम्ब्स। न्यूयार्क : हार्पर एण्ड रो, 1985

2. समा का यह अध्ययन दिल्ली, मुंबई और हैदराबाद में केंद्रित था। यह रिपोर्ट प्रकाशन की प्रक्रिया में है।

3. क्विल्ट में प्रकाशित मरिया माइज़ का आलेख "न्यू रिप्रोडक्टिव टेकनोलॉज़ीज़ः सेक्सिस्ट एण्ड रेसिस्ट इम्प्लीकेशंस" (09.01.1994, पृष्ठ 41) और (एशियन वीमेन्स राइट्स काउंसिल, 1994)

4. इसको लेकर चिकित्सा जगत में उनकी भारी आलोचना हुई। डॉ. मुखर्जी ने कथित रूप से इसी आलोचना से दुःखी होकर 1981 में आत्महत्या कर ली।

5. भारतीय चिकित्सा शोध परिषद, नेशनल गाइडलाईंस फॉर एक्रेडीशन, सुपरविज़न एण्ड रेगुलेशन ऑफ एआरटी क्लिनिक्स इन इंडिया, 2005

6. भारतीय चिकित्सा शोध परिषद बुलेटिन, खंड 14, संख्या 10, अक्तूबर 1984

7. जेनिस जी. रेमंड्स, द प्रोडक्शन ऑफ फर्टिलीटी एण्ड इनफर्टिलीटी : ईस्ट एण्ड वेस्ट, नॉर्थ एण्ड साउथ, इन वीमेन ऐज़ वोम्ब्स, हार्पर कॉलिंस, 1993

8. भारतीय चिकित्सा शोध परिषद, नेशनल गाइडलाईंस फॉर एक्रेडीशन, सुपरविज़न एण्ड रेगुलेशन ऑफ एआरटी क्लिनिक्स इन इंडिया, 2005

9. जेनिस जी. रेमंड्स, रिप्रोडक्शन, पापुलेशन, टेकनोलॉजी एण्ड राइट्स, वीमेन इन एक्शन, खंड 2, 1998

10. भारतीय चिकित्सा शोध परिषद, नेशनल गाइडलाईंस फॉर एक्रेडीशन, सुपरविज़न एण्ड रेगुलेशन ऑफ एआरटी क्लिनिक्स इन इंडिया, 2005

11. ब्रोशर ऑफ आईवीएफ क्लिनिक्स

12. डाल्कन शील्ड एक इंट्रायूटेराइन गर्भधनिरोधी माध्यम था। सन् 1970 के दशक में अमेरिका में इसका व्यापक कारोबर हुआ था। इसके दुष्परिणामों पर विचार किए बिना दुनिया भर की अनगिनत महिलाओं में यह शील्ड लगा दिया गया। नाना तरह की समस्याएं हुई जैसे कई बार हेमरेज़ (रक्त का स्राव), सक्रंमित गर्भपात, इक्टोपिक गर्भधारण, महिलाओं में गर्भधारण की अक्षमता, प्रजनन के अंगों की क्षतिग्रस्तता और कई मामलों में तो मृत्यु भी हुई। अधिक जानकारी के लिए कृपया देखें : इमैक्युलाडा दे मेलो मार्टिन की "इन विट्रो फर्टिलाइजेशन एण्ड रिस्क्स टू वीमेन्स हेल्थ, 9 रिस्क्स : हेल्थ, सेटी एण्ड इनवायरनमेंट 201 (समर 1998)

13. यौन संक्रमण की बीमारियां कुछ संक्रामक बीमारियां हैं जो मोटे तौर पर किसी सवंमित व्यक्ति से यौन संबंध बनाने पर होती हैं। कई प्रकार के जीवाणुओं, विषाणुओं, फंगस आदि से ये बीमारियां फैलती हैं। सिफलिस, गोनोरिया और कैंक्रायड ऐसी ही कुछ प्रमुख बीमारियां हैं।

14. http://www.christinemorton.com/CHM/S0000_week04.htm

समा हर तरह के भेदभाव का विरोध करती है।
वह समानता पर ज़ोर देते हुए, वंचित समुदाय की महिलाओं के सशक्तिकरण ओर उनके अधिकारों के प्रति निष्ठा रखती हैं।

समा का मुख्य कार्य प्रशिक्षण देना, क्षमता को बढ़ाने में सहायता पहुँचाना, पाठ्न–सामग्री तैयार करना, शोध, समर्थन और इससे सम्बन्धित संपर्क सूत्रों को बढ़ाना है।

समा

महिलाओं और स्वास्थ्य के लिए संदर्भ समूह